आदर्श
श्रीसद्गुरु सेवी
शान्ति

श्रीजानकीवल्लभो विजयते

श्रीयुगलानन्य शरणाय नमः

श्रीजानकीवर शरणाय नमः

आदर्श

श्रीसद्गुरु सेवी

अर्थात्

श्रीसतगुरु सदन अयोध्या निवासी रसराज प्रकाशी-
स्वतंत्र विलासी हृत्कमल-विकासी अनन्त श्री

स्वामी रामवल्लभाशरणजी महाराज

का

संक्षिप्त-चरित्र

लेखक—

श्रीमिथिलाकुंज ऋणमोचनघाट
श्रीअवधवासी मैथिली प्रपन्न
पण्डित श्रीमेवारामजी

प्रकाशक

एक अनन्य सतगुरु सेवी भ्राता की सहायता से

श्रीरामविधुशरण 'विधु'

श्रीअयोध्याजी

शुद्ध भाद्र शुक्ल जल विहार एकादशी सं० १९९३

प्रकाशक
श्रीरामविधुशरण 'विधु'
श्रीअयोध्याजी

पुस्तक प्राप्ति स्थान—
श्रीमिथिलादासजी
श्रीसद्गुरु-सदन
श्रीअयोध्याजी

मुद्रक—
बजरंगबली 'विशारद'
श्रीसीताराम प्रेस, जालिपादेवी, का

'विधु'-विनय

श्रीभगवद्भक्तों के लिए भगवान श्रीशङ्करजी कहते हैं:—'रामस्य नाम रूपं च लीला धाम परात्परम्' अर्थात् नाम, रूप, लीला और धाम ये ही मननीय, दर्शनीय, पठनीय एवं सेवनीय हैं। अतः हमारे श्रीसतगुरु भगवान के उपासकों के लिए सतगुरु प्रिय नाम श्रीसीताराम, रूप में चित्रपट स्वरूप से उनकी भव्य झाँकी, प्राप्त ही है। लीला का कोई आधार न होने से यह बात खटकती रही और इस कमी को देख हमारा चित्त आकुल हो रहा था कि यह दुःख किससे कहें कोई सुनता नहीं सब अपने आमोद-प्रमोद में मस्त हैं। तब विवश हो यह कमी और अपनी चिन्ता श्रीमहाराजजू के लघुगुरु भ्राता पं० मेवाराम रामजी से कही और कहा कि बड़ी कृपा हो कि नोट लिख दिया जाय तो चरित्र तैयार हो जाय, आपने स्वीकार किया और लिख कर दिया वही इस रूप में प्रस्तुत है। यह बहुत संक्षिप्त है। बहुत सी घटनाएँ छूट गयी हैं। सब आनी भी असम्भव थीं क्योंकि 'हरि अनन्त हरि कथा अनन्ता।' यदि एक ही व्यक्ति भगवत के सभी चरित्र लिख देता तो और लोग क्या करते। इसीसे जिससे जो बना उसने अपनी जिह्वा को पवित्र करने के लिए लिखा। और उसे पढ़ पढ़ कर मनुष्य संसार-सागर से तरे। इसीप्रकार इस पुस्तक को भी समझें हाँ! हमारे ऐसे 'लीला' लालायित के लिए यही बहुत है। धाम के लिए तो श्रीअवध की प्राप्ति है ही, जिन महानुभाव को श्रीअवध के बाहर रहना होता है उनके लिए हमारे श्रीमहाराजजी ने एक पत्र में मुझे यों लिखा था—

जब तन से न आय सकौ अवधहिं, तब तक मन से मनन ही किया करो।
लोचनाभिराम गौर स्याम सुखधाम नाम, रामसीय हीय से हमेस ही लिया करो॥
सरजू सरित बर न्हाय ध्याय धीय गुरु, पद सद धोय प्रेम अम्बुहि पिया करो।
'रामबिधु शरन' सुमिरि 'रामबल्लभाहि' सुयस सदैव निज सीतल हिया करो॥

यही समझना पर्य्याप्त होगा, और इसीमें कल्याण है।

पुस्तक के लिखने, छपने, प्रूफ संशोधनादि में जो कुछ परिश्रम विमल बुद्धि-वल्लभ बजरंगबली 'विशारद' ने की। उसके लिए कुछ कहना अनुचित है; क्योंकि हमारे प्रभु जब लंका से लौटने पर 'बजरंगबली' के रिनियाँ हुए तब हम क्यों न इस अपार कार्य्य-लंका से पार पाने पर 'बजरंगबली' के रिनियाँ हों? छपाई का खर्च जिस अमल आत्मा की ओर से आया उसने गुप्त-गुफा में रहना ही पसन्द किया तब उसे प्रकट करना उचित नहीं, अतः उस परम प्यारे को हम यही आशीर्वाद देते हैं:—

श्रीसतगुरु पद-कमल में, बाढ़ै भक्ति अमन्द। छुठि सेवा सह देखते, रहौ सदा मुख-चन्द॥

रामविधुशरण 'विधु'

पुष्पाञ्जलि

श्रीसतगुरु सुखमा-सदन, सतगुरु-सदन निवास ।
बिधुबदनी बिधुबदन सों, 'बिधु' बरदायक आस ॥

राजिव-नयन सुख अयन मयन छबि,
मन्द मंद मुसुकि सुमन हरि लेत हैं ।
बदन-मयंक निकलंक स्वच्छ श्रीरामव-
ल्लभा सरन बरन धन भरि देत हैं ॥
भाल सुबिसाल आल तिलक बिराजमान,
शसि सम सीतल सुमन करि चेत हैं ।
रत सुनाम धाम दायक अराम आम,
नमत बिनीत 'बिधु' जन हरि हेत हैं ॥

हरिये बियोग रोग भरिये प्रमोद बारि,
करिये कृपा की कोर जाते अवलोकौं छबि ।
बीते बहु दिवस बिलग भये रावरे ते,
आसुतोष आसुतोष ह्वजै जस रहै फबि ॥
आय अलबेलिन में मिलिकै समेलिन में,
देखौं रसरंग जहँ पहुँचि न सकै रबि ।
दया-दरियाव सतगुरु-महराज-राज,
बिनै योग नाहिं 'बिधु' ताते जीभि रही दबि ॥

बसु बरनन बरनत बिमल, बुद्धि बिबेक बिराग ।
बिधु बरदायक बरन बर, बदत बानि बल बाग ॥

श्री १०८ स्वामी राम वल्लभा शरणा जी

पं० एस. वी. शर्मा फोटोग्राफर नयागंज कानपुर
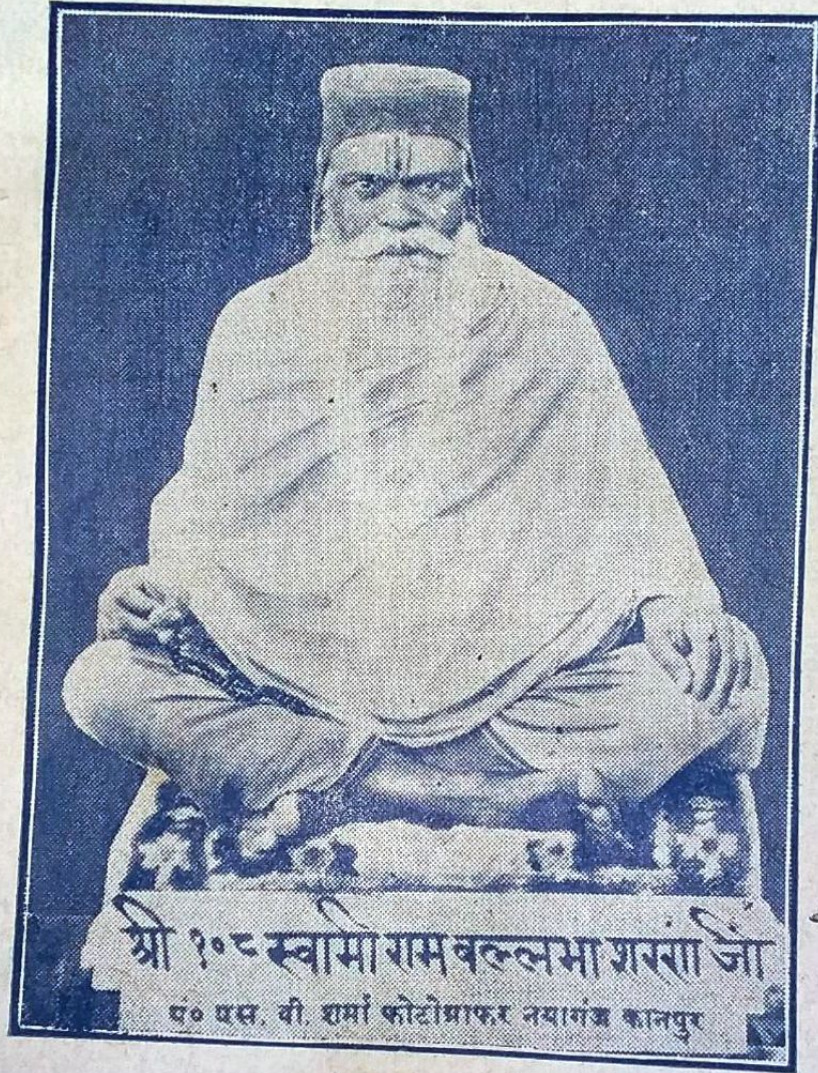
श्रीमहात्माजी की गुरुपरंपरा

रामानन्दमहं वन्दे वेदवेदान्तपारगम्, राम मंत्र प्रदातारं सर्वलोकोपकारकम्
शुभासने समासीनमनन्तानन्दमच्युतम्, कृष्णदासो नमस्कृत्य प्रपच्छगुरु सन्ततिम्
भगवन् यमिनां श्रेष्ठ प्रपन्नोस्मि दयां कुरु, ज्ञातुमिच्छाम्यहंसर्वां पूर्वेषां सत्परम्पराम्
मंत्रराजश्चकेनादौ प्रोक्तः कस्मैपुरा विभो, कथं च भुवि विख्यातो मन्त्रोयं मोक्षदायकः
कृष्णदासवचःश्रुत्वाऽनन्तानन्दोदयानिधिः उवाच श्रूयतां सौम्यवक्ष्यामितद्यथाक्रमम्
पर धाम्नि स्थितो रामः पुंडरीकायतेक्षणः, सेवया परया जुष्टो जानक्यै तारकं ददौ
श्रियः श्रीरपि लोकानां दुखोद्धरण हेतवे, हनूमते ददौ मन्त्रं सदा रामांघ्रिसेविने
ततस्तु ब्रह्मणा प्राप्तो मुह्यमानेन मायया, कल्पांतरेतु रामो वै ब्रह्मणे दत्तवानिमम्
मंत्रराज जपं कृत्वा धाता निर्मातृतां गतः, त्रयी सारमिमं धातुर्वशिष्ठो लब्धवान्परम्
पराशरो वशिष्ठाच्च मुद्रा संस्कार संयुतम्, मंत्रराजं परं लब्ध्वा कृतकृत्यो बभूवह
पराशरस्य सत्पुत्रो व्यासः सत्यवती सुतः, पितुः षडक्षरं लब्ध्वा चक्रे वेदोपबृंहणम्
व्यासो पिबहुशिष्येषुमन्वानःशुभयोग्यताम्, परमहंस वर्याय शुकदेवाय दत्तवान्
शुकदेव कृपापात्रो ब्रह्मचर्य्यं व्रते स्थितः, नरोत्तमस्तु तच्छिष्यो निर्वाण पदवीं गतः
सचापि परमाचार्य्यो गंगाधराय सूरये, मंत्राणां परमं तत्वं राममंत्रप्रशस्तवान्
गंगाधरात्सदाचार्य्यस्ततो रामेश्वरोयतिः, द्वारानन्दस्ततो लब्ध्वा परब्रह्म रतो भवत्
देवानन्दस्तुतच्छिष्यःश्यामानन्दस्ततोगृहीत् तत्सेवया श्रुतानन्दश्चिदानन्दस्ततो भवत्
पूर्णानन्दस्ततोलब्ध्वाश्रियानन्दायदत्तवान्, हर्य्यानन्दोमहायोगीश्रियानन्दांघ्रिसेवकः
हर्य्यानन्दस्य शिष्योहि राघवानन्दइत्यसौ, यस्यवैशिष्यतांप्राप्तोरामानन्दस्त्वयंहरिः
तस्मात्सुरसुराख्यस्तु ततो माधव संज्ञकः, गरीवाख्यस्ततःप्राप्तोलक्ष्मीदासस्ततःपरम्
तस्माद्गोपालदासस्तु नरहरिदासस्ततः, श्रीमान्केवलरामश्च ततः प्राप्त षडक्षरः
श्रीदामोदरदासाख्यः शिष्यस्तस्यमहामतेः साधुसेवी दयायुक्तः सदाचारेषु निष्ठितः
तस्माद् हृदयरामस्तु विरक्तश्च गुणालयः, कृपारामोपिवैतस्माद्दलदासस्ततोभवत्
तस्मान्नृपतिदासस्तु रामभक्तोनुसूयकः, तस्माच्छंकरदासोहि रामनाम प्रकाशकः
तस्माज्जातोमहाराजोजीवारामेतिसंज्ञकः, शुभस्थाने चिराणाख्ये राजतेरसिकाग्रणी
तस्यसंवन्ध संभूतो महाराज प्रतापवान्, साकेताख्ये पुरे रम्ये विरराज महाप्रभुः
सीतारामौ प्रददतुः तस्यनाम विलक्षणम्, युगलानन्यशरणाख्यं विदितं पृथिवीतले
तस्यानन्त कल्याणगुणाख्यातो विचक्षणः, स्वभावं तस्य सौशील्यंकारुण्यंकटुवर्जितम्
सौन्दर्य्यं तस्यलावण्यंमाधुर्य्यंरसवर्द्धनम्, तस्मिन्नेप्रकाशंते यथा सीतापतौगुणाः

प्रवक्तुंनाप्यलंकोपितस्य माहात्म्यमुत्तमम्, नमस्तस्मै नमस्तस्मै नमस्तस्मै नमोनमः
तस्यशिष्यो महाप्राज्ञो रसिकःसर्वधर्मवित्, श्रीजानकीवरशरणःप्रख्यातोजगतीतले
सदा गुरुपदेशेषु नैष्ठिको बहु साधुषु, वक्ताबृहस्पतिःसाक्षात्सहिष्णुत्वेमहीसमः
सीतारामरसानांच वर्द्धको भेददायकः, छेदकः संशयानांच रसराज प्रवर्द्धकः
दयितः सर्वभूतानां राममंत्र प्रदायकः, गुरुवाक्यस्य तत्वज्ञः वासः श्रीसरयूतटे
लक्ष्मणाख्य प्रकोटेतु सीतारामस्य सन्निधौ, गुरु सन्निकटे तत्रक्षेत्र वासे च सुष्टुधीः
तस्यशिष्योगुरोर्निष्ठः कविः काव्यविशारदः, नाम श्रीरामवल्लभाशरणो रामसेवकः
सद्गुरु सदने रम्ये शोभिते सरयूतटे, तस्मिन्वसतिवै धीरो गानविद्याविचक्षणः

१. अनन्तश्रीरामजी महाराज
२. ,, श्रीजानकीजी महारानी
३. ,, श्रीहनुमानजी ,,
४. ,, श्रीब्रह्माजी महाराज
५. ,, श्रीवशिष्ठजी ,,
६. ,, श्रीपराशरजी ,,
७. ,, श्रीव्यासजी ,,
८. ,, श्रीशुकदेवजी ,,
९. ,, श्रीपुरुषोत्तमाचार्यजी ,,
१०. ,, श्रीगंगाधराचार्यजी ,,
११. ,, श्रीसदाचार्यजी ,,
१२. ,, श्रीरामेश्वराचार्यजी ,,
१३. ,, श्रीद्वारानन्दजी ,,
१४. ,, श्रीदेवानन्दजी ,,
१५. ,, श्रीश्यामानन्दजी ,,
१६. ,, श्रीश्रुतानन्दजी ,,
१७. ,, श्रीचिदानन्दजी ,,
१८. ,, श्रीपूर्णानन्दजी ,,
१९. ,, श्रीश्रियानन्दजी ,,
२०. अनन्तश्रीहर्यानन्दजी ,,
२१. ,, श्रीराघवानंदजी महाराज
२२. ,, श्रीस्वामीरामानंदजी ,,
२३. ,, श्रीसुरसुरानन्दजी ,,
२४. ,, श्रीमाधवानन्दजी ,,
२५. ,, श्रीगरीबानन्दजी ,,
२६. ,, श्रीलक्ष्मीदासजी ,,
२७. ,, श्रीगोपालदासजी ,,
२८. ,, श्रीनरहरिदासजी ,,
२९. ,, श्रीकेवलकूबारामजी ,,
३०. ,, श्रीदामोदरदासजी ,,
३१. ,, श्रीहृदयरामजी ,,
३२. ,, श्रीकृपारामजी ,,
३३. ,, श्रीरत्नदासजी ,,
३४. ,, श्रीनृपतिदासजी ,,
३५. ,, श्रीशंकरदासजी ,,
३६. श्रीजीवारामजी (श्रीयुगलप्रियाशरणजी)
३७. ,, श्रीयुगलानन्यशरणजी
३८. ,, श्री जानकीवर श्रीशरणजी
३९. श्रीरामबल्लभाशरणजी महाराज

श्रीमहात्माजी के कुछ विरक्त शिष्यों के नाम

१ श्री सरयूशरणजी (बाराबंकी)
२ श्रीसियालालशरणजी (परमहंस)
३ श्रीसियाबिहारीशरणजी
४ श्रीरामकृपालुशरणजी
५ श्रीमहावीरशरणजी (पुजारी)
६ श्रीमिथिलाशरणजी (मिथिलादास)
७ ,, कान्तशरणजी
८ ,, साकेतबिहारीशरणजी (पुजारी)
९ ,, रामदेवशरणजी (पुजारी)
१० ,, रामपूरणशरणजी
११ ,, रामप्रसादशरणजी (नर्वदातट)
१२ ,, रामशरणजी
१३ ,, सियारामशरणजी (पंगु)
१४ ,, सियारामशरणजी (आजमगढ़ी)
१५ ,, अवधबिहारीशरणजी
१६ ,, रामप्रह्लादशरणजी
१७ ,, सियारघुनाथशरणजी
१८ ,, रामलालशरणजी
१९ ,, रामकामताशरणजी
२० ,, रामकिशोरशरणजी (काशी)
२१ ,, जानकीरसिकशरणजी
२२ ,, रामसुन्दरशरणजी (बाराबंकी)
२३ ,, सरयूशरणजी (हैदरगढ़तहसील)
२४ ,, रामशंकरशरणजी (व्यास)
२५ ,, रामशंकरशरणजी (पर्यटक)
२६ ,, रामभगवानशरणजी
२७ ,, रामनाथशरणजी (हनुमानबाग)
२८ ,, रामशुकदेवशरणजी
२९ ,, जयजयरामशरणजी
३० ,, चन्द्रकलाशरणजी
३१ ,, प्रभुदयालशरणजी
३२ ,, रामकरुणाशरणजी
३३ ,, रामगुलामशरणजी (अम्बाला)
३४ ,, रामप्रियाशरणजी (सखी)
३५ ,, रामनारायणशरणजी
३६ ,, रामदयालशरणजी
३७ ,, महावीरशरणजी (पर्यटक)
३८ ,, रामभगवानशरण (पर्यटक)
३९ ,, विमलाशरणजी
४० ,, सीतारामशरणजी (काशी)
४१ ,, विमलाशरणजी (दूसरे)
४२ ,, महावीरशरणजी (बाराबंकी)
४३ ,, रामहरिहरशरणजी
४४,, रामसुन्दरशरणजी(पिचूरीनिकामत)
४५ ,, रघुनाथशरणजी
४६ ,, रामगुलामशरणजी
४७ ,, सीतारामशरणजी (पर्यटक)
४८ ,, रामविधुशरणजी 'विधु'
इनके शरीर छूट गए।
४९ ,, रामरतन शरणजी
५० ,, सियाशरणजी
५१ ,, किशोरीशरणजी
५२ ,, सियारामशरणजी (मधुकरिया)
५३ ,, सरयूशरणजी (निज सेवा)
५४ ,, रामहर्षशरणजी (पुजारी)
५५ ,, रामद्वारिकाशरणजी
५६ ,, मौनीजी
५७ ,, मौनीमहावीरशरणजी
५८ ,, मिथिलेशनन्दिनीशरणजी
५९ ,, रामभगवानशरणजी
६० ,, राममंगलशरणजी
६१ ,, सीतारामशरणजी
६२ ,, मिथिलाबिहारीशरणजी
६३ ,, साधुशरणजी
६४ ,, रामबलीशरणजी

श्रीगुरुचरण कमलेभ्यो नमः

श्री सीतारामाभ्यां नमः

श्रीमहात्माजी की जन्म कुण्डली

श्रीशुभ संवत १९१५ शाके १७८० फाल्गुन शुक्ल ३ तृतीयायां तिथौ चन्द्रवासरे ४७।१३। रेवती नक्षत्रे ४२।२। शुक्ल नाम योगे २०।३६। एवं पञ्चाङ्गे दिनमानम् २६।२। श्रीसूर्योदयादिष्टम् २६।५२। तत्समये सिंह लग्नोदये रेवती भे ४ चरणे स्वामी श्रीरामवल्लभाशरणः प्रादूर्भूत् । भजात् ४६।८। भभोग ६१।१८।

जन्माङ्कम्

श्रीसद्गुरवेनमः

श्रीसीतारामाभ्यां नमः

आदर्श

श्री-सद्गुरु-सेवी

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु गुरुर्देवो महेश्वरः,
गुरुरेव परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥
सीतानाथ समारंभां रामानन्दार्य मध्यमाम्,
अस्मादाचार्य पर्यन्तां वन्दे गुरुपरम्पराम् ॥

संसार में जितने भी प्रसिद्ध पुरुष--महात्मा, राजनीतिज्ञ देशभक्त, साहित्यिक, वैज्ञानिक आदि--होते हैं उनकी प्रसिद्धि किसी विशेष कारण से होती है, ऐसे लोगों में अन्य अनेक सद्गुणों के साथ ही एक ऐसी प्रधान विशेषता होती है जिसको पूरा करने में वे अपनी सारी शक्ति लगा देते हैं, अपना सर्वस्व अर्पण कर देते हैं। इसी कारण वे उस विषय में अपूर्व सफलता प्राप्त करते हैं। यहाँ पर हम जिन महात्मा का चरित लिख रहे हैं उन्होंने भी अपने जीवन-काल में भक्तों के लिये एक बहुत ही उपयोगी और आवश्यक बात सुझाई, जिसकी ओर से लोगों का ध्यान हट-सा गया था। जिसे लोग भूल-सा रहे थे। वह है—गुरु-पूजा, गुरु-सेवा और गुरु-भक्ति। हमारे शास्त्रों में गुरुभक्ति का माहात्म्य बहुत बड़ा है। गुरु का स्थान ईश्वर से भी बड़ा कहा है। क्योंकि गुरु के द्वारा ही ईश्वर की प्राप्ति होती है।

वेद वाक्य है—

आचार्यवान् पुरुषो वेद स गुरुमेवाभिगच्छेत् ।
समित पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठमिति ॥

वामन कल्प में लिखा है—

यो मन्त्रः स गुरुः साक्षात् यो गुरुः स हरिः स्मृतः ।
गुरुर्यस्य भवेत्तुष्टस्तस्य तुष्टो हरिः स्वयं ॥

महात्मा कबीर कहते हैं—

गुरु गोविंद दोऊ खड़े, काके लागौं पायँ ।
बलिहारी उन गुरू जिन, गोविंद दियो लखाय ॥

श्रीरामचरित मानस में श्रीरामचंद्रजी ने श्री वाल्मीकि जी से यह पूछा है कि मैं कहाँ रहूँ। तब श्री वाल्मीकिजी ने उनके रहने के चौदह स्थान बताए हैं उन्हीं स्थानों में से एक में कहते हैं—

तुम्ह तें अधिक गुरुहिं जिय जानी ।
सकल भाय सेवहिं सनमानी ॥

और श्री सद्गुरु के संबंध में अन्यत्र यह भी लिखा है—

यदा दृष्ट्वा रामभद्रो जीवान्दुःखार्णवे गतान् ।
तदा वै गुरुरूपेण प्रादुर्भावो भवत्प्रभुः ॥
तस्मात्सर्वात्म भावेन गुरुमेवाश्रयेतत्सुधी ।
अनायासेन तस्याशु महान्मोदः प्रजायते ॥

गुरु-भक्ति और पूजा की प्रथा सिक्ख-संप्रदाय में तो बहुत काल से चली आती है। परंतु सिक्ख लोग केवल अपने उन्हीं दस गुरुओं की पूजा करते हैं जो पहले हो चुके हैं। उनमें अपने गुरु की पूजा और भक्ति की विशेष पद्धति नहीं है।

हमारे चरित-नायक ने अपने गुरु की पूजा की प्राचीन

परिपाटी को पुनः जाग्रत किया। और वे आजीवन गुरु की पूजा और सेवा में लगे रहे। इसमें कभी तनिक भी प्रमाद नहीं किया। वे गुरुदेव को ईश्वर से भी अधिक मानते थे। और श्री गुरुपूजा, सेवा और भक्ति को ईश्वर की पूजा से अधिक मानते थे। सर्व-प्रथम उन्होंने ही श्रीअवध में श्रीगुरुदेव का मंदिर निर्माण कराया जो श्रीसद्गुरु-सदन के नाम से प्रसिद्ध है। जो उनकी गुरुभक्ति की स्मृति सदियों तक लोगों को दिलाता रहेगा। जो उनकी अमर कीर्ति है। उन्हीं के कुछ चरित्रों को स्मरण कर वाणी और रसना को सफल करने चला हूँ।

हमारे चरित-नायक के पिता श्रीयुत पं० गणेशदत्तजी जिला बाराबंकी के तिलोकपुर नामक ग्राम के निवासी थे। आप कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे, आपकी जातिगत उपाधि दीक्षित थी। श्री रामानुजीय वैष्णव मतावलंबी होते हुए भी आपका हृदय इतना उदार था कि आप विशेष भेदभाव नहीं रखते थे। आप बड़े धार्मिक तथा छहो शास्त्रों में पारंगत थे। आपका संपूर्ण समय पठन-पाठन और भगवद्भजन में व्यतीत होता था। श्रीमद्भागवत् से आपको विशेष स्नेह था और उसकी कथा बड़े अनुराग से कहते थे। कथा कहते कहते आप उसमें तल्लीन हो अपने को भूल जाते और श्रोताओं को भी तल्लीन बना देते। श्रोता-समाज पर कथा का इतना प्रभाव पड़ता कि उसके नेत्रों से अविरल अश्रुधारा बहने लगती, शरीर रोमांचित हो जाता और वे चित्र-वत् हो जाते थे। पंडितजी का भगवत्प्रेम और उनकी विद्वत्ता तथा धर्मनिष्ठा पर मुग्ध हो बहुत से लोग उनके शिष्य बनने लगे।

पंडितजी का जीवन-यापन बड़े सुखपूर्वक होता था। एक

पुत्री--श्री मिथिलादेई जी--भी उत्पन्न हुई थीं। परंतु पुत्राभाव के कारण पंडितजी दुखित रहते थे। आपकी अवस्था भी कुछ अधिक हो चली थी परंतु भक्त का दुख भगवान से कैसे देखा जाता। भगवत्कृपा से पंडितजी की पत्नी गर्भवती हुईं। गर्भावस्था में पंडितजी की पत्नी सदैव प्रसन्न वदन रहती थीं, मुखारविंद पूर्ण चन्द्र सदृश सदैव प्रफुल्लित रहता था। दसम मास होने पर संवत् १६१५ वि० में फाल्गुन शुक्ल तृतीया सोमवार को प्रातःकाल पंडितजी की पत्नी को पुत्र रत्न उत्पन्न हुआ। उस समय दसो दिशाएँ प्रसन्न थीं। पुत्रोत्पत्ति का समाचार विदित होते ही गाँव में चारों ओर आनंद छा गया। घर-घर बधाइयाँ होने लगीं। झुंड की झुंड स्त्रियाँ दधि, दूर्वा, रोचन, फल, फूल आदि मांगलिक वस्तुएँ लेकर पंडितजी के आंगन में आईं। पंडितजी ने सबका यथोचित सत्कार किया। सभी कृत्य बड़े उत्साह तथा धूमधाम के साथ सम्पन्न हुए। शीघ्र ही नामकरण का समय आ पहुँचा। यह कृत्य भी बड़े बड़े पंडितों की उपस्थिति में बड़े धूम-धाम से हुआ। पंडितों ने बालक का नाम श्रीबलदेव रखा। ये ही श्रीबलदेव जी हमारे चरित-नायक हैं। नामकरण के अनंतर एकत्र पंडित-मंडली दक्षिणादि पा प्रसन्न हो आशीर्वाद देती हुई बिदा हुई।

भक्तराज श्रीबलदेवजी की बाल-क्रीड़ा देख माता-पिता अत्यंत आनंदित होते थे। उनका बालस्वरूप अत्यंत मनोहर एवं मनोमुग्धकारी था। उनका हृष्ट-पुष्ट शरीर, बड़ी बड़ी कजरारी आँखें तथा घुंघराले लच्छेदार बालों को जो देखता वही मोहित हो जाता। बालकेलि करते हुए पाँच वर्ष बीतने के

अनंतर आपका चूड़ाकरण संस्कार बड़े समारोह के साथ सम्पन्न हुआ। आठवें वर्ष विधिपूर्वक यज्ञोपवीत संस्कार होने के पश्चात् आपका विद्यारंभ हुआ। आठ वर्ष की अवस्था तक आप दुग्ध पीकर ही रहते थे। एक दिन आपने स्वतः अपनी बड़ी बहन से कहा कि मैं खिचड़ी खाऊँगा। बड़ी बहन ने प्रसन्नता के साथ खिचड़ी बनाकर आपको खिलाई। तब से आप अन्न खाने लगे। लड़कपन से ही आप पढ़ने लिखने में बहुत तेज थे। आपके विद्यागुरु श्रीयुत पं० भगवानदीनजी हैं जो रियासत फूलपुर के राजगुरु हैं और अद्यावधि वर्तमान हैं। भक्तराज श्रीबलदेवजी को लड़कपन में खेलों में पतंग का बड़ा शौक था। आपके पिताजी लखनऊ आदि बड़े शहरों में कथा कहने जाते तो वहाँ से प्रायः आपके लिये पतंग अवश्य ले आते। पतंग उड़ाने में आप दिन दिन भर बिता देते। खाना-पीना तक भूल जाते। यह देख आपके पिताजी अप्रसन्न होते तो पंडिताइनजी कहतीं कि आपही तो लड़के की आदत बिगाड़ते हैं, आप ही तो स्वयं दूर दूर से पतंग खरीद लाकर लड़के का उत्साह बढ़ाते हैं। यह सुन पंडितजी हँसकर चुप हो जाते। खेल में इतना अधिक लग जाने पर भी आप पढ़ने-लिखने में कभी असावधान नहीं रहे। सब पाठ इस प्रकार शीघ्रता से याद हो जाता मानो वह पूर्व पठित हो। धीरे धीरे लड़कपन से ही आपकी कवित्व-शक्ति भी जाग्रत हो गई। आप छोटी अवस्था में ही सुंदर रचनाएँ करने लगे। कविता में आप अपना नाम बलदेव रखते थे। यहाँ पर आपकी बाल्यावस्था की दो रचनाएँ उद्धृत की जाती हैं—

राम के तू नाम में है आलसी अधम मन,
मिथ्यावाद करन में चातुर बनत है।
निज मन-मुकुर उठाय लखु बार बार,
आप आगे निरखत और न गनत है॥
'द्विज बलदेव' जौन संगत-प्रभाव कहे,
तौन तेरे बार बार हित की भनत है।
छल-छिद्र छाँड़ि भज सियाराम सीताराम,
जौन सुख यामैं तौन और न अनत है॥

अस्मत् श्रीगुरुचरन-कमल नम।
परम प्रेम पूरन प्रकास रज नख मनि दुति जन हृदय हरत तम॥
असन विन्दु चिह्न बर शोभा निरखि लग्यो त्रिभुवन प्रभुता कम।
लघुमति मम बखानि कहै केहि बिधि जेहि निवसति साधन आदिकसम
प्रभु गुरु ईस दयानिधि स्वामिनि सम नहिं हित और हर खल यम।
सरजु पवित्र किला लछिमन बिच श्रीजानकिबर सरन सदा हम।
देव देव 'बलदेव' नाथ यह मो मन-मधुप रहै तव पद रम॥

जिस समय श्रीभक्तराज जी की अवस्था दसवर्ष की थी उस समय आपके छोटे भाई का जन्म हुआ। उस समय आपके यहाँ श्रीभागवत की कथा होती थी इसलिए उनका नाम श्रीभागवत रखा गया। जब वे श्रीसद्गुरु भगवान के शरणागत हुए तब उनका नाम श्री भगवन्तशरण पड़ा।

लड़कपन से ही श्रीभक्तराजजी के हृदय में भक्ति का बीज उत्पन्न हुआ। साधु-संतों में आपका अधिक प्रेम था। जो कोई साधु-संत गाँव में आ जाते आप उनकी सेवा करते

और अपने साथियों से भी सेवा कराते। आपके ग्राम में श्रीराम-लीला भी होती थी। आप सदैव उसे देखने जाते। इस कार्य में आप कभी नहीं चूकते थे। एक दिन संयोगवश श्रीभरतजी के स्वरूप किसी कारणवश उपस्थित न हो सके लोगों ने उनकी अनुपस्थिति में आपको ही श्रीभरतजी का स्वरूप बनाया। बड़ी दिव्य झाँकी हुई। जिस प्रकार श्रीभरतलालजी ने श्रीरामजी की चरण-पादुका की सेवा चौदहवर्ष तक की, उसी प्रकार आपने श्रीसद्‌गुरु रामजी के चित्रपट एवं चरणपादुका की सेवा आजीवन की। जिसका प्रसंग आगे आवेगा। लड़कपन से ही संतसेवा आपको कितनी अधिक प्रिय थी यह कहा नहीं जा सकता। आपका स्वभाव कैसा विनम्र और सहनशील था, आपकी आत्मा कितनी महान् तथा विचार कितने उच्च थे यह निम्नलिखित छोटी सी घटना से ज्ञात होता है। एक बार एक संत आपके गाँव में आए उन्हें स्वच्छता अत्यंत प्रिय थी। वे बहुत स्वच्छता के साथ रहते और सदैव खड़ाऊँ पहनकर चलते थे। खड़ाऊँ उनसे छूटती न थी। परंतु उनका स्वभाव कुछ उग्र था। श्रीबलदेवजी इन संत की सेवा किया करते थे। एक दिन संतजी ने किसी कारण अप्रसन्न होकर आपको खड़ाऊँ से मारा। आप कुछ बोले नहीं वरन् हँसते रहे। आपकी सहनशीलता देखकर लोगों ने समझा कि यह बालक आगे चलकर एक बड़ा महात्मा होगा। भक्ति की भावना आपमें उत्तरोत्तर बढ़ने लगी। जब आप भोजन करने के लिये थाली पर बैठते तो ध्यान मग्न हो बड़ी देर तक भोग लगाते थे। गाँव के बाहर पश्चिम-उत्तर की ओर एक तालाब के किनारे श्रीहनुमानजी की एक विशाल मूर्त्ति

है। आप नित्य वहाँ दर्शन के लिये जाते और एकांत स्थान में बहुत देर तक बैठकर ध्यान लगाते।

इसके पश्चात् आप माता-पितादि सहित श्रीअयोध्याजी आए। और श्रीबाबा रघुनाथदासजी की छावनी में उतरे। श्रीसरयूजी में स्नान करके आपने प्रधान स्थानों में जाकर दर्शन किया। रात्रि में सोते समय आपने यह स्वप्न देखा कि आप श्रीरघुनाथदासजी के पास गए हैं, बाबाजी किसी को मंत्रोपदेश कर रहे हैं। आप एकाएक बहुत जोर से रोने लगे। किसी ने कहा कि लड़का घबड़ा गया है। किसी ने कहा कोई वस्तु चाहता है। लोग तरह तरह की बातें करने लगे। परंतु आप का रोना बढ़ता ही गया। बाबाजी ने पूछा बच्चा तुम क्या चाहते हो। आपने कहा कि मुझे आश्चर्य होता है कि जिन सांसारिक वस्तुओं की चाह के लिये ये लोग मुझसे कहते हैं उनके फेर में पड़कर चौरासी लक्ष योनियाँ व्यतीत हो गईं। अब कृपा कर ऐसी वस्तु दीजिए कि अन्य वस्तुओं की आवश्यकता न पड़े और पुनः जन्म न ग्रहण करना पड़े। श्रीबाबाजी ने हाथ से पश्चिम की ओर बताया, वहाँ पहुँच पर्दा ज्योंही हटाया त्योंही देखा कि श्रीसीताराम लक्ष्मणजी विराजमान हैं। वे मूर्त्तियाँ ऐसी थीं जैसी श्रीलक्ष्मण किला में विराजमान हैं। श्रीसीतारामजी की मूर्त्ति का अकथनीय अत्यंत दिव्य प्रकाश दिखलाई पड़ा। उन्हें देखकर आपको परमानंद प्राप्त हुआ। प्रातःकाल निद्रा खुलने पर आपने इस दिव्य स्वप्न का वृत्तांत पिता जी से कहा। जिसे सुनकर वे बोले कि तुम धन्य हो। अत्यंत भाग्यशाली हो कि तुम्हें स्वप्न में श्रीसीतारामजी के दर्शन प्राप्त हुए।

इसके पश्चात् आप श्रीअवध से लौटकर घर आए। पिताजी जब कथा कहने जाते तो साथ में आप भी जाते। और अत्यंत प्रेमपूर्वक कथा श्रवण करते। जब श्रीमद्भागवत के दसवें स्कंध की कथा के प्रसंग में श्री अक्रूरजी द्वारा श्रीकृष्णजी का मथुरा ले जाने का प्रसंग आया तो पंडितजी उस अवसर पर सूरदास जी का निम्नलिखित पद गाते—

अब नँद गैयाँ लेहु सम्हारि।
हम तुम्हारे घर आनि प्रगटे रहन कौं दिन चारि।
'सूर' के प्रभु चलत रथ पर कपट कागज फारि॥

यह पद आपको याद हो गया। घर के कार्यों में भक्त-राज का चित्त न लगते अवलोक पिताजी जब कभी कार्य करने के लिये कहते तो आप सूरदास का उक्त पद सुनाते। जिसे सुन पिताजी हँसकर रह जाते। इस प्रकार आनंद से समय व्यतीत होता रहा।

एक दिन कहीं से कथा के लिये बुलाहट आई। तो आपके पिताजी ने उसे यह कहकर लौटा दिया कि तुम चलो। मैं कल पहुँचूँगा। परंतु रात्रि में ही आपको भयानक ज्वर आ गया। आपको अपने नश्वर शरीर छूटने के आसार मालूम हो गए। आपने लोगों से कहा कि अब आत्मा इस शरीर में रहना नहीं चाहता सूर्योदय होते ही आप गोबर से आँगन लिपवाकर कुशासन बिछाकर लेट गए, और प्राणायाम करते हुए इस पंच-भौतिक शरीर को छोड़कर दिव्यधाम को प्राप्त किया। पिताजी की मृत्यु से दुखी हो आप रोते हुए तालाब के पास श्रीहनु-मानजी के सामने जा जोरों से रोने लगे तो मन्दिर से वाणी हुई

कि रोते क्यों हो यह सब तुम्हारे हित के लिये ही हुआ है जाकर आगे का कार्य करो। वहाँ से आकर भक्तराजजी ने पिताजी की मृत्यु-क्रिया विधिपूर्वक बड़े श्रद्धा के साथ की।

भक्तराजजी की माता श्रीमती सुखदेईजी पति के देहावसान से बहुत ही दुखित हुईं। ऐसा दुख बिरले ही किसी को होता है। आप अधिक दिनों तक पति का वियोग-दुख सहन न कर पंचभौतिक शरीर छोड़ परलोक में पति से जा मिलीं।

अब भक्तराजजी पर ही गृहस्थी का सारा उत्तरदायित्त्व आ पड़ा परंतु आपका मन उस ओर आकृष्ट नहीं हुआ। आप भक्ति में ही लगे रहते। यह देख कुछ लोगों ने सलाह कर एक दिन आपको बहुत ऊँचा नीचा समझाकर कार्य करने के लिये राजी किया। यह निश्चय हुआ कि आप एक साझेदार के साथ गुड़ खरीदकर कानपुर ले जाकर उसे बेचेंगे। निश्चय के अनुसार आप गुड़ लेकर कानपुर गए। वहाँ पर कुछ गुड़ तो आपने व्यापारियों के हाथ बेचा और कुछ साधु-संत तथा भिखारियों को बाँट दिया। आप प्रत्येक साधु, तथा भिखारी को एक भेली गुड़ देते थे कोई विमुख होकर नहीं लौटता था। यह बात सारे शहर में फैल गई कि एक महाजन गुड़ बेचने आया है। जो सबको गुड़ बाँटता है अतः झुंड के झुंड गुड़ माँगने वाले आने लगे और शीघ्र ही सारा गुड़ बँट गया। गुड़ समाप्त होने के बाद साझेदार ने आपसे हिसाब माँगा तो आपने गुड़ की बिक्री से जो रुपए प्राप्त हुए थे उसे उसका हिसाब समझाया उसने पूछा कि अवशिष्ट क्या हुआ ? तब आपने कहा कि रंज न हों तो बतावें। उसने कहा कि कहिए,

तब कहा कि इतने रुपये तो बिक्री से आए। शेष साधु-संत जो भी आए उनसे हमने खरीदने के लिये कहा तो उन्होंने उत्तर दिया कि पैसे तो हमारे पास हैं नहीं। तब हमने उनसे कहा कि जो सज्जन एक हज़ार नाम जपेगा उसे एक भेली गुड़ दिया जायगा। इस प्रकार शेष गुड़ बिक गया। यह सुन साझेदार इनकी विचित्रता पर बड़ा हँसा। इनका पुराना सब वृत्तांत जानने के कारण उसे तनिक भी क्रोध नहीं हुआ। वह बोला वाह, भइया आपने तो खूब खजाना बटोरा है। इस व्यापार में तो खूब लाभ हुआ? आपकी यह बात सुनकर गांव वालों को भी बड़ा आश्चर्य हुआ। और वे खूब हँसे।

एक बार श्री भक्तराजजी की यह इच्छा हुई कि जगन्नाथजी का दर्शन करना चाहिए। आप बड़े उत्साह के साथ पैदल श्रीजगन्नाथजीका दर्शन करने के लिये चले। शरीर-निर्वाह के लिए साथ में कुछ सामान ले लिया। घर से चलकर आप जौनपुर होते हुए काशीजी पहुँचे। सर्व पाप-हारिणी गंगा में स्नान कर आपने श्रीविश्वनाथजी को गंगा जल चढ़ाकर दर्शन किया। और गोस्वामी श्रीतुलसीदास जी कृत रुद्राष्टक द्वारा श्रीशिवजी की स्तुति कर हाथ जोड़कर उनसे प्रार्थना की--हे आशुतोष महाराज मुझे ऐसा आशीर्वाद दीजिए कि जिस प्रकार आप श्रीसीतारामजी के नाम, रूप, लीला, धाम में मग्न रहते हैं उसी प्रकार इन चारों के अतिरिक्त मेरा भी मन किसी दूसरे में न लगे। प्रार्थना कर चुकने के अनंतर मंदिर से यह चौपाई सुनाई पड़ी—

"जो इच्छा करिहौ मन माहीं।
हरि-प्रसाद कछु दुर्लभ नाहीं॥"

यह सुनकर आपको अत्यंत प्रसन्नता हुई कि श्रीशिवजी ने कृपाकर आशीर्वाद दिया। धर्मशास्त्र के अनुसार काशी में तीन रात्रि रहकर आप वहाँ से आगे चले। आपकी भक्ति क्रमशः बढ़ने लगी। आप चौबीस घंटे में केवल एक बार अपने हाथों से भोजन बना उसे भगवदर्पण कर ग्रहण करते थे। आपका भोग लगाना विलक्षण था। घंटों आँखें बंद किए ध्यान-मग्न रहते। इस संबंध में आपके मुखारविंद से हमने एक कहानी सुनी है। उसे यहाँ पर लिखना अप्रासंगिक न होगा--

कोई एक धनी सज्जन बड़े भक्त तथा साधु-सेवी थे। उन्होंने संतों के लिये एक अलग मकान दे रखा था और उनकी सेवा के लिये एक नौकर रख दिया था। वह नौकर प्रेमपूर्वक सेवा करता था। और सेवा से अवकाश पा दोपहर को धनिक का हल चला खेत जोतता था। उसकी सेवा से प्रसन्न होकर संतों ने उसे मानसिक पूजन की विधि बतला दी थी। धीरे-धीरे मानसिक पूजा में वह इतना अभ्यस्त हो गया कि पूजा के समय अपने को वह भूल जाता था। एक दिन वह हल चलाने गया। हल-बैल रख कर वह मानसिक पूजन करने लगा। पूजा करते-करते अंत में वह भगवान को दही-भात का भोग लगाकर प्रसाद पा रहा था। इतने में ही वह धनिक वहाँ आ पहुँचा। हल-बैल एक किनारे पड़ा और नौकर को एक ओर चुपचाप बैठे देख वह क्रोध से आग बबूला हो गया और उसने नौकर को एक लात कसकर जमाई। लात लगते ही उसका ध्यान भग्न हो गया और दही तथा भात बिखर गया उसकी सुंदर सुगंधि से चारो ओर

सुगंधि ही सुगंधि उड़ने लगी। यह देख वह धनिक आश्चर्य-चकित हो गया और उसने नौकर से इसका रहस्य पूछा। नौकर ने सब बातें ठीक-ठीक बतला दीं। उसे सुनकर धनिक ने उससे क्षमा-याचना की और यह कहा कि आज से हम तुमसे अपनी सेवा का कार्य न लेंगे। तुम आनन्द से भजन तथा मानसिक पूजन करो। और अन्य संतों के समान हमारे यहाँ ही रहो। वह मानसिक पूजन तथा भजन करता हुआ शरीर छोड़कर परमधाम को प्राप्त हुआ।

श्री भक्तराजजी चलते-चलते वैद्यनाथ धाम पहुँचे जिसे देव-घर भी कहते हैं। यह स्थान पर्वत के ऊपर होने के कारण अत्यंत रमणीक है। इस स्थान के श्रीशंकरजी का रावणेश्वर नाम सुन-कर आपने पंडे से इस नाम के पड़ने का कारण पूछा। तो पंडे ने श्री वैद्यनाथ धाम की कथा यों सुनाई। एक समय रावण कैलाश पर्वत पर गया और शिवतांडव द्वारा शिवजी की स्तुति की। शिवजी ने प्रसन्न होकर वर माँगने के लिये कहा। रावण ने कहा कि आप अपना स्वरूप रूप लिंग दीजिए। जिसे लंका में स्थापित कर नित्य प्रति आपका दर्शन और पूजन करूँ। श्री शिवजी वचन-वद्ध हो गए थे अतः अपनी मूर्ति देकर यह कहा कि इस मूर्ति को रास्ते में और कहीं भी न रखना सीधे लंका में ही ले जाकर रखना यदि रास्ते में कहीं रक्खोगे तो यह वहाँ से फिर न उठेगी। चलते-चलते रावण को लघुशंका बहुत तेज मालूम हुई। उसे न रोक सकने के कारण उसने एक ब्राह्मण से यह कहा कि इस मूर्ति को तुम लिए रहो तो मैं लघुशंका कर लूँ। ब्राह्मण ने कहा कि यदि तुम जल्दी लघु-

शंका करके मूर्ति को न ले लोगे तो मैं इन्हें जमीन पर रख दूंगा। रावण को जब लघुशंका करने में देरी लगी तो ब्राह्मण देवता ने चिल्लाकर रावण से कहा कि इनको जल्दी लो नहीं तो मैं रख देता हूँ। लेकिन रावण आवाज़ देने पर भी नहीं आया तो ब्राह्मण देवता ने मूर्ति वहीं पर रख दी। लघुशंका करने के पश्चात् रावण ने मूर्त्ति को उठाने का बहुत प्रयत्न किया। परंतु वे वहाँ से नहीं उठे। उन्होंने कहा कि हमने तो पहले ही कह दिया था कि हमें रास्ते में कहीं न रखना। अतः रावण विवश होकर वहाँ से लंका चला गया। उसी समय से यह स्थान द्वितीय कैलास हो गया। यह कथा सुनकर आपको शिवजी की उक्त मूर्ति के प्रति अत्यंत श्रद्धा हुई और आपने बड़े प्रेमपूर्वक उनकी पूजा और स्तुति की।

वहाँ से चलकर मेदनीपुर और कटक होते अनेक प्रकार के आनंदानुभव करते जब आप श्री तुलसी चौतरा पर पहुँचे जहाँ से श्रीजगन्नाथ जी का मंदिर दिखलाई पड़ता है। दर्शन करते ही आपकी दशा अत्यंत विलक्षण हुई। सावधान होने के पश्चात् आप चंदन तालाब पहुँचे। उसमें स्नान कर आप मंदिर में दर्शन करने के लिये गए। मंदिर में पहुँचते ही वहाँ की सुगंध लगते ही आपको शरीर की सुधि बुधि नहीं रही, आनंदातिरेक के कारण आप कुछ देर के लिए जड़वत् हो गए। होश में आते ही आपने दर्शन और परिक्रमा की। श्रीजगन्नाथजी के मंदिर का रचना-कौशल देखने के पश्चात् आपने एक वैष्णव के यहाँ डेरा डाला। और सभी प्रधान स्थानों के दर्शन किए। श्रीमारकण्डेयजी का दर्शन कर समुद्र में स्नान किया और

श्रीवेड़ी हनुमानजी के दर्शन से आप अत्यंत आनंदित हुए वहाँ के श्रीपुजारीजी से आपने श्रीवेड़ी हनुमानजी की कथा पूछी। तो पुजारी ने कहा कि श्रीहनुमानजी प्रसादी लेने के लिये नित्य श्रीअयोध्याजी चले जाते थे। उनके न रहने पर समुद्र की तरंगों को देखकर श्रीलक्ष्मीजी डरती थीं। उन्होंने श्रीजगन्नाथजी से कहा कि हनुमान जब यहाँ रहते हैं तब समुद्र इतने ज़ोर की तरंगें नहीं लेता। यह सुनकर श्रीजगन्नाथजी ने श्रीहनुमानजी के पैरों में बेड़ी डाल दी तब से श्रीहनुमानजी का नाम श्रीवेड़ी हनुमान पड़ा। वहाँ पर जो जनकपुर है जहाँ कि रथयात्रा में श्रीजगन्नाथजी बड़े मंदिर से जाते हैं, यहाँ श्रीजनकपुर की लीला होती है, इस स्थान के दर्शन से आपको अत्यंत प्रसन्नता हुई। वहाँ पर कुछ दिन रहकर आपने श्रीजगन्नाथजी से प्रार्थना की कि हे श्रीजगन्नाथजी, आप कलिकाल में जीवों के उद्धारार्थ प्रगट हुए हैं अतः हमारे ऊपर कृपा कर श्रीसीता-रामजी के चरण-कमलों में प्रीति-प्रदान कीजिए। यह प्रार्थना कर सब तीर्थों का दर्शन करके आप वहाँ से चलकर छत्तीस-गढ़ पहुँचे। वहाँ एक धनी महंत ने आपको अपने यहाँ ठहरने के लिये कहा। परंतु आप वहाँ नहीं ठहरे। वहाँ से चलने पर मार्ग में एक सूरदास का साथ हुआ। रात में एक गाँव के निकट बगीचे में एक वृक्ष के नीचे आप लोगों ने डेरा डाला। सब कार्यों से निवृत्त होने के पश्चात् सूरदास तो सो गए परंतु आप आसन पर बैठे नाम जपते रहे। इतने में आपने विचित्र लीला देखी—देखा कि एक भूत विविध प्रकार की क्रीड़ा कर रहा है। कभी वह ऊँट बनता, कभी पर्वत, कभी इंद्र, कभी बैल एवं बारात आदि। बीच-

बीच में आप बोल उठते कि खूब बने हो। सूरदास पूछते कि क्या बना है तो आप उनसे कहते कि चुपचाप सोते रहो। इसी प्रकार रात भर तमाशा होता रहा। प्रातःकाल वहाँ पर गाँव के कुछ लोग आए उन लोगों ने आपसे कहा कि आप यहाँ रात में कैसे रह गए? यहाँ तो एक भयंकर भूत रहता है। आपने उन लोगों से रात्रि का सारा चरित्र कह सुनाया जिसे सुनकर लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ। गाँव के लोग श्रीभक्तराजजी को बड़े सम्मानपूर्वक गाँव में लिवा ले गए। और आपका बड़ा आदर-सत्कार किया। वहाँ से चलकर आप अपने घर लौट आए। और सुख-पूर्वक अपने भाई श्रीभगवंतशरणजी के साथ रहने लगे। इस बीच आपको एक लड़की हुई जिनका नाम श्रीरामदुलारी था। कुछ दिनों के पश्चात् आपकी धर्मपत्नी सौभाग्यवती श्रीमती महादेईजी का स्वर्गवास हो गया। यद्यपि आपका चित्त पहले से ही विरक्त रहा करता था परंतु इस घटना से आपकी विरक्तता निर्वाध हो गई। और इसके अनंतर आप श्रीअयोध्याजी आए।

श्रीअयोध्याजी में आकर आप श्रीहरिभक्तिन माई के स्थान पर ठहरे। और अपनी इच्छा माईजी से कह सुनाई। माईजी ने कहा कि श्रीसरयूजी में स्नान कर आओ तो मैं बतलाऊँ कि क्या करना चाहिए। आपको यह सुन अत्यंत उत्कंठा हुई। आपने श्रीरामगंगा में स्नान कर प्रार्थना की कि हे प्रेमवाहिनीजी आपका जैसा नाम है वैसाही प्रेम मुझे श्रीसीताराम के चरण-कमलों में दीजिए। वहाँ से माईजी के यहाँ आए और पूजन की सामग्री साथ में लिए हुए लक्ष्मण किला पर पहुँचे।

*इस समय आपकी अवस्था २४ या २५ वर्ष थी।

श्रीमाईजी ने अनंत श्री पंडितराज श्रीजानकीवरशरणजी महाराज को भक्तराज का परिचय देते हुए कहा कि ये गुरुमुख होने आए हैं, ब्राह्मण के लड़के हैं। यह सुन महाराज बड़े प्रसन्न हुए और श्रीहरिहरशरण जी से पूजावाले घर से अपनी डलिया †मँगवाई। तथा वैष्णवों के जो पाँच संस्कार होते हैं वे पाँचो संस्कार किए। सर्वप्रथम मस्तक में तिलक लगाया, युगल कंठी गले में बाँधी मानों श्रीयुगल-संबंध की गाँठ बाँधी। फिर धनुष-बाण लगाया, इसके धारण करने से जीव अभय हो जाता है। तदनंतर श्रीगुरुजी ने कान में युगल-मंत्र का उपदेश दिया। मंत्रोपदेश करते ही निकटवर्ती सभी लोग श्रीसीताराम नाम की ध्वनि करने लगे। अब नाम-करण-संस्कार की बारी आई। श्रीगुरुदेव जी ने आपसे पूछा कि तुम्हारा नाम क्या है। आपने कहा—बलदेव। श्रीगुरुदेव जी ने कहा कि तुम्हारा नाम रामवल्लभाशरण रखा जाता है। यद्यपि यही नाम हमारे गुरुभाई का भी है। परंतु यह नाम तुम्हारे लिये अधिक उपयुक्त है। यह नाम रखे जाने पर आप परम प्रसन्न हुए। आप कविता में अपना नाम 'बलदेव' रखते हुए हिचकते थे। क्योंकि 'बलदेव' नाम के कवि वर्तमान थे। इससे लोगों को भ्रम होता था। इसके पश्चात् आपने

* पूजन-सामग्री में माला, श्री, प्रसाद के निमित्त मिष्टान्न, कपूर एवं चादर तथा कुछ द्रव्य ले गये थे।

† डलिया में रहनेवाली सामग्री—श्री, रामरज, पत्थर की छोटी कुंडी में एक कुंडी से ढँकी हुई श्री, आचमनी, गंगाजली में श्रीसरयूजल, तुलसीदल, कंठी, माला, पंचमुद्रा और एक छोटी-सी साफी।

श्रीसद्गुरु भगवान् को श्री लगाया, चादर ओढ़ाई, माला धारण कराया, श्रीठाकुरजी के यहाँ से भोग लगकर प्रसाद आ गया। आरती की, तथा द्रव्य श्रीगुरुचरणों पर रखकर साष्टांग दंडवत किया। तदनंतर श्रीगुरुदेवजी महाराज ने आज्ञा दी कि गुफ़ा में श्रीमहाराजजी के तथा मंदिर में श्रीठाकुरजी के दर्शन कर आओ। मंदिर में पहुँचते ही पूर्व लेखानुसार श्रीरघुनाथदासजी महाराज ने स्वप्न में जो अँगुली से संकेत किया था वह बात सहसा आपके स्मृति-पट पर आ गई और आपको स्मरण हो गया कि उन्होंने अँगुली से जो संकेत किया था वह स्थान यही है। वहाँ से दर्शन कर गुरुजी के यहाँ लौट आए और उनसे मिलकर अपने आसन पर चले आए। आते समय श्रीगुरु महाराज ने इस प्रकार कृपा-कटाक्ष से देखा कि आपका मन श्रीगुरुचरणों में लग गया। आसन पर आकर श्रीमाईजी से पूछा कि गुफावाले श्रीमहाराज जी का शुभ नाम क्या है। और किस प्रकार किला पर विराजमान हुए यह जानने की हमारी प्रबल उत्कंठा है। इसका संक्षिप्त परिचय हमें दीजिए। माईजी आपकी जिज्ञासा सुनकर बड़ी प्रसन्न हुईं और उन्होंने इस प्रकार कहना प्रारंभ किया।

श्रीस्वामीजी महाराज का आविर्भाव पटना जिलांतर्गत ईशरामपुर (इस्लामपुर) ग्राम में सारस्वत-ब्राह्मण के यहाँ कार्तिक शुक्र ७ संवत् १८७५ में हुआ। आपके जन्म से आपके ग्राम में बड़ा आनंद हुआ। चंद्रकला के समान आप दिन दिन बढ़ने लगे।

चूड़ाकरन यज्ञोपवीतादि संस्कार विधिपूर्वक धूमधाम से सम्पन्न हुए। महाराज पंडित हरिकृष्णजी से --जो उस समय उस

अनंत श्री स्वामी युगलानन्यशरणजी महाराज लक्ष्मण किला

प्रान्त में सर्वशास्त्र के ज्ञाता तथा अद्वितीय विद्वान् थे—आपने विद्याध्ययन किया। आप संस्कृत, उर्दू, फारसी, अरबी एवं गुरुमुखी के विद्वान् थे। आपके दो भाई तथा दो बहिनें और थीं। आपको पतंग उड़ाने का बड़ा शौक था।

आपकी थोड़ी ही अवस्था में आपकी माताजी का शरीर छूट गया। आपके शरीर में इतना बल था एक बार एक युवा कसरती महंत ने मज़ाक में ही आप से हाथ मिलाया। आपने उनका हाथ स्वभाव से ही इतनी ज़ोर से दबाया कि महंत चिल्ला उठे और बाल्यावस्था में ही आपका इतना अधिक पराक्रम देखकर चकित हो गए। आपने हँस दिया। आप संगीत में भी पारंगत थे। एक बार आपके यहाँ एक भक्तमाली जी आए। उनसे आपने कहा कि मुझे श्रीसीताराम मंत्र का उपदेश दीजिए तथा भावना की पद्धति बताइए। उन्होंने कहा कि यदि आपका ऐसा ही विचार है तो हमारे महाराजजी महंत श्रीजीवारामजी उपासना संबंध नाम श्रीयुगलप्रियाजी—चिरान (छपरा) में विराजमान हैं। उनसे मिलिए। समय पाकर आप चिरान पधारे और वहाँ वैष्णव-नियमानुसार शरणागत हुए। आपका शुभ नाम श्रीयुगलानन्य शरणजी हुआ। लौटते समय आप पटना में आए और श्री गुरुगोविन्द सिंहजी के मुख्य स्थान हर मंदिर में पधारे। यहाँ श्री ग्रंथ साहब की पूजा होती थी। आपकी छोटी अवस्था देखकर पुजारी जो ग्रन्थी थे वे मन में सामान्य भाव लाए। पश्चात् आपने मन में मुस्कान के साथ ग्रंथ साहेब के हार्द्र का निरूपण किया। सब लोग आश्चर्य चकित हो गए। और वहाँ के महंत एवं अन्य लोगों ने

प्रार्थना करके और कहा कि आप सच्चे बादशाह बाबा नानक के स्वरूप हैं। आप हमारे अपराधों को क्षमा कीजिए। यह कह उन्हें उच्चासन पर बैठाया और कहा कि श्रीगुरुवाणी से हम लोगों को कृतार्थ कीजिए।

आपने अनेक प्रकार से गुरु ग्रंथ साहब की व्याख्या की। वहाँ पर एक वर्ष तक रहे। तत्पश्चात् अपने घर पर लौट आए। आपसे जब कोई पूछता कि अमुक व्यक्ति कहाँ है तो आप एकाएक उत्तर देते थे कि अमुक स्थान पर है।

सेवकदास नाम के एक उदासी संत आपके अनुरागी थे। उनसे आप सभी बातें कह देते थे कुछ छिपाते न थे। आप सदैव ब्रह्मानंद में लीन रहते थे अतः आपको क्षुधा-पिपासा नहीं लगती थी। सब लोग आश्चर्य में रहते थे कि वे कुछ खाते-पीते नहीं। सदा प्रसन्न रहते हैं। क्या बात है। आपने सोचा कि भेद खुलता जा रहा है। यहाँ पर अधिक दिन रहना उचित नहीं है। अतः पिताजी से कहा कि हमारी काशी जाने की इच्छा है। सेवकदासजी के साथ आप घोड़े पर सवार हो काशी के लिये चले। लोगों से कहा कि मैं शीघ्र लौटूँगा। कुछ दिन बाद काशी पहुँचे और अपने चाचा श्रीगोकुलचंद नायब के यहाँ ठहरे।

श्रीबाबा रघुनाथदासजी सिंध-निवासी आपको देखकर कृतकृत्य हो गए। आपका सत्संग अधिक रहता था। आपका शास्त्र-निरूपण देखकर श्रीरघुनाथदासजी दंग रह जाते थे। इस समय श्रीस्वामीजी की अवस्था १६ वर्ष थी। काशीवासियों को कृतार्थ करते हुए आपका विचार चित्रकूट जाने का हुआ

यह इच्छा आपने श्रीगोकुलचंद्रजी से प्रगट की। उन्होंने कहा ठहरिए, शीघ्रता न कीजिए। मैं वहाँ के हाकिम को पत्र लिख देता हूँ। नौकर के साथ जाइए जिसमें आपको कष्ट न हो। वहाँ कुछ दिन रहकर शीघ्र लौट आइएगा। आपने कहा कि वहाँ के हाकिम (श्रीरघुनाथजी) से खूब जान पहिचान है। और जाना-आना भी उन्हीं के अधीन है। यह कह चित्रकूट के लिये चल दिए। चलते समय काशी के लोग बहुत व्याकुल हुए। उन्हें शीघ्र आने के लिये कहकर शांत्वना दे आप चल दिये। चित्रकूट में पहुँच कर आपका तीव्र वैराग्य उदित हुआ। घोड़ा तथा साथ का सामान बाँटकर आपने पूर्ण वैराग्य धारण किया। श्रीरामसेवकदासजी से भी चले जाने के लिये कहा। परंतु उन्होंने साथ नहीं छोड़ा। इस प्रकार कुछ काल भजन करते हुए तथा चित्रकूट के स्थानों का आनंद लेते हुए आपकी इच्छा श्रीअयोध्या जाने की हुई।

उदासी संत के साथ बाँदा, ब्रह्मावर्त्त तथा लखनऊ होते हुए श्रीअवध पहुँचे। पहुँचते ही श्रीअयोध्या का परम प्रकाश जगमग रूप आपके नेत्रों के सामने दीखने लगा। आप आनंद-विभोर हो नाचने लगे। अनुराग में बड़े विचित्र-विचित्र पद आपके मुख से निकले। मणिकूट आदि स्थानों के दर्शन करते हुए स्वतंत्र विचरते थे। मधुकण माँगकर भोजन करते थे। किसी के यहाँ भोजन नहीं करते थे। पैरों में घुँघरू बाँधे श्रीअवध की गलियों में नृत्य करते हुए विचरते थे। यह बात श्रीअवध में विख्यात हो गई। आपका रहस्य सुन षट् शास्त्रज्ञ, विद्या-मार्तण्ड पंडित उमादत्त त्रिपाठीजी ने अपने भाई को

भेजकर आपको बुलवाया। आप आए। आपको देखकर पंडित जी बड़े प्रसन्न हुए और प्रसाद पाने की प्रार्थना की। पंडित जी की सज्जनता तथा प्रेम देखकर आपने उनके यहाँ प्रसाद पाया। उस समय घर के सभी लोग आपको घेरकर बैठ गए थे। पंडितजी ने कहा कि आप नित्य यहीं प्रसाद पाया कीजिए। आपने उत्तर दिया कभी हो जाया करेगा। क्योंकि आप ज्ञान-वृद्ध तथा वयोवृद्ध उभय सम्पन्न हैं। यह सुन पंडित जी बहुत प्रसन्न हुए और मंगलाभिषेक आशीर्वचन कहकर कहा—आपका मनोरथ सिद्ध हो।

कुछ काल के बाद आपने अयोध्याजी के पश्चिम बारह कोस पर श्रीसरयूजी के किनारे घृताची कुंड पर चौदह मास का मौन-व्रत धारण किया। केवल श्रीसीताराम नाम का उच्चारण करते थे और पाँचवाँ अक्षर नहीं कहते थे। सत्पात्र सात ब्राह्मणों के यहाँ से एक ब्राह्मण का लड़का*अलोनी जौ की रोटी माँगकर लाता था उसी को आप एक बार पाते थे और कुछ न पाते थे। तथा प्रसन्नतापूर्वक रहते थे। जब आप रात्रि के समय आनंद में लवलीन हो जोर से श्रीसीताराम नाम का उच्चारण करते तो वह ध्वनि कोसों तक सुनाई पड़ती थी उसे सुनकर लोग आर्द्र चित्त हो जाते थे। जब से आप विरक्त हुए तब से श्रीसीताराम नाम को ही अनेक रागरागिणियों में गाते थे।

उसी समय राजा रुस्तम सिंह जिसका राज्य बादशाह ने जब्त कर लिया था। वह दर्शनसिंह चकलेदार के यहाँ नौकर था और फौज़दार होकर पीतखाना ग्राम में नियुक्त था। वह

* यही हमारे चरित-नायक के श्रीगुरुदेवजी महाराज हैं।

स्वामीजी के पास जाया करता था। एक दिन वह पूजन का कुछ सामान तथा द्रव्य लेकर गया। आपने लिख दिया कि जिसको इसकी आवश्यकता हो दे देना उसमें से आपने कुछ भी स्वीकार नहीं किया। उसने हाथ जोड़कर प्रार्थना की कि यदि मेरे पदार्थों को आप ग्रहण नहीं करते तो कृपाकर मुझे ही कुछ दीजिए। आपने कहा–क्या कहते हो? यह सुनते ही वह चरणों में गिर पड़ा और यह कहकर रोने लगा कि रक्षा कीजिए। आपने उसकी विह्वलावस्था देखकर कहा कि उठो राजा रुस्तमसिंह खड़े हो जाओ। इसी वचन की देरी थी वह उठकर खड़ा हो गया और बाद में अपने स्थान पर चला गया। घटना के दो दिन बाद ही शाही फरमान आया कि राजा रुस्तमसिंह बहादुर को दियरा का राज्य तथा खिल्लत दी गई।

कुछ काल के बाद वहाँ पर एक वृद्ध संत आए जिन्होंने अपने को यह प्रसिद्ध किया कि मैं रसायनी हूँ। श्रीस्वामीजी ने कहा कि यह जाल छोड़ दो। उसने कहा कि संसार में धन की बड़ी आवश्यकता होती है बिना इसके कोई कार्य नहीं चलता। श्रीस्वामीजी ने कहा धन ही तो विपत्ति का मूल है। उसने कहा कि हमने यह कीमियागरी बड़ी कठिनता से सीखी है। ऐसा कोई नहीं है जिसे धन प्रिय न हो। अंत में आपने उस वेषधारी रसायनी से कहा कि अच्छा जाओ श्रीसरयूजी में स्नान कर आओ। जब साधू नहाने को गया तो देखता क्या है कि सरयूजी के किनारे कोसों तक चाँदी की रेत पड़ी है। इतने में ही और भी क्या देखता है कि एक स्त्री के पीछे सोलह सखियाँ दिव्य भूषण-वसन पहिने चाँदी की रेत की

ओर चली जा रही हैं। श्रीसरयूजी में सोने का कमल बहा जा रहा है। और भी कई आश्चर्यजनक घटनाएँ देखीं। लौटकर महाराजजी के पास आया और त्राहि-त्राहि कहकर प्रणाम किया। महाराज ने कहा कि कहिए रसायनीजी स्नान कर आए उसने प्रार्थना की कि महाराज वहाँ हमने अद्भुत चरित देखा इसका रहस्य कृपाकर कहिए। आपने कहा कि तुम्हारा मन पहले का-सा है या उसमें कुछ अंतर पड़ा है। उसने कहा अब सोना-चाँदी तथा संसार के अन्य ऐश्वर्य भी प्राप्त हों तो भी मुझे उनकी आवश्यकता नहीं है। वहाँ जो चमत्कार देखा सरकार उसे मैं क्या कहूँ। आपने मंद मुसकान के साथ कहा कि यह श्रीसीतारामजी की कृपा तथा सत्याजी का प्रभाव है। श्रीसरयूजी के तट पर अनेक विचित्र लीलाएँ देख पड़ती हैं। परंतु केवल उन्हें ही दीख पड़ती हैं जिनपर श्रीसद्गुरुजी की कृपा होती है। अब तुम्हारा प्रयोजन सिद्ध हो गया। जो कहता हूँ उसे याद रखना। श्रीसीताराम का स्मरण करते रहना और लौकिक वासनाओं से दूर रहना। वह प्रणाम कर वहाँ से चल दिया।

आप श्रीअवध आए। श्रीसुधामुखी सरयूदासजी, अवधूत श्रीसियारामशरणजी, और अयोध्यादासजी तथा उमापति त्रिपाठीजी गाते-बजाते समारोह के साथ आपको लिवा लाए और प्रमोद-वन में आपका निवास हुआ। नित्य नवीन सत्संग तथा आनंद का अनुभव होने लगा। कुछ समय पश्चात् आप चित्रकूट चले। बहुत से लोग आपके साथ थे। रास्ते में जो कोई आपसे मिलने आता उससे आप श्रीसीतारामनाम-जप का

नियम करवाते थे। १०००० से लेकर एक लाख तक नाम-जप का नियम करवाते थे। इस प्रकार बहुतों का उद्धार किया। चित्रकूट में पहुँच कर आपने यह निश्चय किया कि भिक्षान्न को छोड़कर अष्ट धातु तथा अष्ट भोग का परित्याग करेंगे। श्री-चित्रकूट की रमणीय भूमि में आप द्वंद्‌रहित हो आनंद के साथ विचरने लगे।

रीवाँ-नरेश महाराज विश्वनाथसिंहजी को यह पता चला कि एक अद्वितीय महात्मा चित्रकूट में आए हैं। उनका दर्शन करना चाहिए। यह सोच वे हज़ारों गुणियों के समाज-सहित आकर प्रमोद वन में ठहरे। श्रीमहाराजजी राजसी तथा तामसी प्रकृति के लोगों से दूर रहते थे। रीवाँ-नरेश ने आपको बहुत ढुँढ़वाया। परंतु उनका पता नहीं चला। लोगों से पूछने पर पता चला कि जानकी कुंड से लेकर स्फटिक शिला तक वे विचरा करते हैं। एक दिन पता चला कि स्वामीजी स्फटिक शिला पर बैठे रागिणी अलाप रहे हैं। राजा ने तत्काल अपने गवैया मुहम्मद खाँ को जो ६००) मासिक वेतन पाता था उसे आज्ञा दी कि बीन लेकर तुरत वहाँ जाकर हमारे रास-मंडल के पद गाओ, मैं आता हूँ। उसने वैसा ही किया। वह वहाँ जाकर श्रीस्वामीजी को सलाम कर खड़ा हो गया। उसके साथ और भी साज का सामान था। महाराज ने उसे हाथ जोड़े खड़े देखकर जाना कि यह कोई विशेष गुणी है अतः आपने उसे बैठने की आज्ञा दी। वह बैठ गया। और फिर खड़ा होकर हाथ जोड़कर बोला कि आज्ञा हो तो बीन बजाकर कुछ गाऊँ। आज्ञा पा राजा के बनाए हुए पद गाने लगा। और इधर

हरकारे ने संवाद दिया कि महाराजजी गाना सुनने में तल्लीन हैं। राजा कुछ लोगों को साथ लिये हुए वहाँ पहुँचे। वे महाराज को देखकर कृतकृत्य हो गए और हाथ जोड़कर साष्टांग दंडवत किया। उठते न थे महाराज ने कहा कि उठिए, आइए, तब राजा आकर बैठे। महाराज ने कुशल-प्रश्न पूछा। उसे सुनकर राजा गद्गद् हो गए। आपने कहा—राजा हम तुम्हारे रासमंडल के पद सुनकर बहुत प्रसन्न हुए। राजा ने कुछ रहस्य संबंधी प्रस्ताव किया जिसके संबंध में आपने कहा कि यह एकांत की वस्तु है। किंतु संक्षेप में बताकर समाधान कर दिया। तत्पश्चात् राजा अपने स्थान पर आए। दूसरे दिन राजा पुनः दर्शन के लिये आए उस दिन महाराज श्रीजानकी-कुंड पर विराजमान थे। राजा ने प्रार्थना की कि हमने कई पुस्तकें लिखी हैं परंतु उनमें इतना परिश्रम नहीं हुआ है जितना श्रीकबीर-बीजक का तिलक लिखने में हुआ है। ऐसी कृपा हो जिसमें वह श्रेष्ठजनों के लिये उपयोगी हो जाय। आपने मंद मुसकान के साथ कहा अच्छा कहते हो। जिन विषयों में राजा को संदेह था वह श्रीस्वामीजी की कृपा से दूर हो गया।

राजा ने प्रार्थना की यदि सरकार रीवाँ चलते तो इस दास का घर चरण-रज के स्पर्श से पवित्र हो जाता। आपने कहा कि यदि श्रीअवध के रास्ते में होता तो संभव था कि कभी चला जाता इसके पश्चात् राजा दंडवत कर चला गया।

एक दिन आप श्रीजानकीकुंड पर विराजमान थे और नामोच्चारण कर रहे थे। नेत्रों से अश्रुधारा बह रही थी। इतने में एक अत्यंत सुकुमारी बालिका कटोरा में दूध लिए हुए

आई और श्रीस्वामीजी महाराज से कहा—इसे पी लीजिए। आपने आँखें नहीं खोलीं। फिर उस बालिका ने कहा कि दूध पी लीजिए। आपने आँखें खोलीं तो आपको एक प्रकाश मालूम हुआ। आपने दूध लेकर पी लिया। और आनंद का नशा आपको चढ़ गया, आप उसी में मग्न हो गए।

एक बार आप श्रीसीताकुंड पर विराजमान थे। उस समय चित्रकूटवासी श्री संत हरिदासजी भक्तमाली सुगंधित फूल का गजरा लिए हुए आए। गर्मी का समय था। उन्होंने वह गजरा स्वामीजी को पहनाना चाहा। आप उस समय मौज में थे आपने आज्ञा दी कि श्रीकिशोरीजी के कुंड में छोड़ दो। यद्यपि भक्तमालीजी ने माला मंदाकिनीजी में छोड़ दिया परंतु मन में कहने लगे कि यदि हम जानते कि स्वामीजी माला न धारण करेंगे तो हम यह माला श्रीअहिल्या-मंदिर में श्रीठाकुरजी को पहिनाते। क्योंकि वे संत उक्त मंदिर में कथा कहा करते थे। संध्या समय जब आप कथा बाँचने आए तब आपने श्रीठाकुरजी की ओर दृष्टि डालते ही देखा कि वही हार श्रीरघुनाथजी के गले में पड़ा है और उसकी सुगंध से मंदिर सुवासित हो रहा है। आश्चर्य में आकर श्रीपुजारीजी से पूछा कि यह माला श्रीचौबे के बाग का है इसे यहाँ कौन लाया? पुजारी ने कहा कि पूजा तो मैं ही करता हूँ परंतु माला का हाल मुझे नहीं मालूम। भक्तमालीजी अचंभित होकर रह गए। दूसरे दिन जब भक्त-मालीजी स्वामीजी के दर्शन को गए। तब वह प्रसंग चला तब स्वामीजी हँस पड़े और कहा कि भक्तमालीजी इसी से तो मैंने माला नहीं पहना। उस समय श्रीयुगल सरकार कुंड में

स्नान कर रहे थे मैंने कहा आपही उन्हें पहना दीजिए। भक्त-मालीजी ने कहा हे महाराज हमारे अपराधों को क्षमा कीजिए।

चौबेजी (चित्रकूटाध्यक्ष) का पुत्र अत्यंत दुखी था। डाक्टर, हकीम और वैद्यों ने जवाब दे दिया। मृतवत् हो रहा था। चौबेजी स्वामीजी के पास पहुँचे। (उस समय स्वामीजी कामद गिरि की परिक्रमा में विराजमान थे) और बड़े दुखी हो रुदन करने लगे। परम कृपालु श्रीस्वामीजी से कष्ट देखा नहीं गया। आपने आज्ञा दी कि श्रीकामतानाथजी का रज ले जाकर लड़के पर छिड़क दो। उन्होंने वैसा ही किया, लड़का तुरत अच्छा हो गया।

इस प्रकार अनेक चरित्र करते हुए आपके चित्त में श्री अवध चलने का विचार हुआ और आप श्रीअवध आए। आपके साथ परमहंस श्रीस्वयंप्रकाश भी थे। आपको देखकर अयोध्यावासी बड़े आनंदित हुए। श्रीपंडित उमापति त्रिपाठी तथा श्रीपरमहंस शीलमणिजी आदि की हार्दिक इच्छा थी कि हमलोग स्वामीजी के संनिकट ही रहें। परंतु आपका विचार एकांत स्थल में रहने का था इसलिए आप गुप्तार घाट के निकट निर्मली कुंड कर पर्णकुटी बनवाकर निवास करने लगे। यद्यपि आप विज्ञानावस्था में रहते थे। परंतु आपने सदाचार विचार कर एक छोटा-सा मंदिर बनवाया और जब श्रीयुगल सरकार श्रीसीताराम का विग्रह स्थापित रहने का समय आया तब अयोध्या की सब संतमंडली तथा चिरान-निवासी श्री-महंतजी महाराज (श्रीयुगलप्रियाजी) आदि एकत्र हुए और परमानंद के साथ प्रतिष्ठा-उत्सव हुआ। पश्चात् श्रीस्वामीजी

महाराज अपने मंदिर में आनंद के साथ रहने लगे।

ईश्वरेच्छा से हिंदू-मुसलमानों में वैमनस्य होने के कारण बड़ा उपद्रव हुआ। उसी समय में अंग्रेजी अमलदारी भी हुई। कुछ बागियों ने फिरंगियों के बँगले का सामान महाराज के स्थान में लगा दिया। कुछ दिन के बाद जब फिरंगी पहुँचे और गोरों की पलटनें आईं। तब प्रेमियों ने स्वामीजी से कहा कि इन्हीं लोगों का सामान बगीचे में लगा है और भी अंगरेजी सामान बहुत है। अतः सरकार कुछ दिन के लिये कहीं अन्यत्र विराजमान हो जायँ नहीं तो बड़ा अनर्थ होगा। क्योंकि बागियों को और जिनके यहाँ सामान हैं उन्हें वे लोग बड़ा दंड दे रहे हैं। आपने प्रसन्न वदन, मंद मुसकान के साथ कहा— इस दृढ़ विश्वासी जीव को कौन दुखी करनेवाला है। ध्रुव प्रह्लाद आदि की कथा देखो। इसपर भी संदेह हो तो श्रीअवध-किशोर नामामृत रसना से पान करो वे प्रतिपल सबकी रक्षा कर रहे हैं। कोई किसी का क्या कर सकता है। इस प्रकार आनंद होता रहा। उस उपद्रव के पश्चात् अंगरेजी फौज का सेनापति श्रीमहाराजजी के निकट आया। उस समय महाराज चरण-पादुका पहने सानंद टहल रहे थे। उन्हें देखकर संकुचित हो गया। पश्चात् वह बोला कि श्रीमहाराज युगलानन्यशरण आप ही का नाम है। आपने कहा—है तो यही। उसने कहा— साहब लोगों का बँगला उजाड़कर यह बाग बना है और अँग-रेजी बहुत सी वस्तुएँ आपके पास हैं। आपने मंद मुसकान के साथ कहा कि निस्संदेह। उसने पूछा कि ये चीजें आपके पास किस प्रकार आईं। आपने उत्तर दिया कि जब तुम लोग यहाँ

से चले गए तब यहाँ के लोगों को तुम्हारे आने की उम्मीद नहीं थी। इससे उस समय जो रजोगुणी लोग यहाँ आया करते थे उन्होंने इसको खोदकर इसे निर्माण किया। यही इसका वृत्तांत है अब इस समय परमेश्वर ने तुमको हाकिम बनाया है जो चाहेगा तुमसे करा लेगा। वह अफसर वहाँ से चला आया। लोगों से स्वामीजी का हाल पूछा। लोगों ने कहा कि दस वर्ष से यहाँ रहते हैं। पहुँचे हुए महात्मा हैं। नित्य परमानंद हुआ करता है।

उस अंग्रेज को महाराज का प्रताप देखने में आया। इधर आपने विचारा कि विजातीयों के संग में रहना अच्छा नहीं है। अब अन्यत्र रहना चाहिए। श्रीसरयू महल जो श्रीलक्ष्मण किला में है वहाँ निवास करना चाहिए। और उधर जनरल साहब का हुक्म आया कि मकान गिराया जायगा जो कुछ उज्र करना हो करें। आपने मंदमुस्कान के साथ कहा कि हमें गिर जाने में खुशी है। मकान गिराया गया और उसका सामान श्रीस्वामीजी के पास भेज दिया गया। नित्य नवीन उत्सव होते रहे। इधर अयोध्यावासी प्रेमियों के भी चित्त में यह आया कि म्लेच्छों के बीच में श्रीस्वामीजी का रहना अच्छा नहीं है अतः उन्होंने श्रीअवध चलने की प्रार्थना की। आपने कहा कि ऐसा ही होगा। अँगरेजों को भी यह मालूम हुआ कि श्रीस्वामीजी यहाँ से श्रीअवध चले जायँगे अतः उनके मन में भी खेद हुआ और उन्होंने स्वामीजी के संबंध की सारी बातें पार्लमेंट को लिखीं। वहाँ से आर्डर आया कि स्वामीजी जहाँ कहीं भी स्थान चाहें उनसे पूछकर उन्हें स्थान दिया जाय। आपने किला

मुबारक (श्रीलक्ष्मण किला) को पसंद किया। वह स्थान आपको दिया गया। वह स्थान श्रीमहारानी विक्टोरिया के आर्डर से दिया गया जिसपर किसी प्रकार का टैक्स नहीं है। पश्चात् महाराज श्रीअवध आए। स्वर्गद्वार पर निवास किया। फिर श्रीलक्ष्मण किला पर चले आए। और आप अखण्ड श्रीलक्ष्मण किला पर निवास करने लगे।

रीवाँ राज्य के दीवान श्रीदीनबंधुजी को यह ज्ञात हुआ कि महाराज किले पर आकर निवास करने लगे तब वे आए और अपने बड़े पुत्र को महाराज का शरणागत कराया और मंदिर के लिए प्रार्थना की। आपने अस्वीकार किया। तब श्रीदीनबंधु ने बहुत दुखी हो विनती की कि महाराज मंदिर बन जाने दीजिए। आप जिसको चाहेंगे दे देंगे। और भी नेमी प्रेमियों ने महाराज से प्रार्थना की कि सरकार हम लोगों को एक अवलंब हो जायगा। तब आपने मंद मुस्कान के साथ कहा कि अच्छा जैसी इच्छा हो करो हम प्रसन्न हैं। संवत् १९२२ में मंदिर की नींव पड़ी और बना। श्रीसीतारामजी की प्रतिष्ठा हुई और वे पधारे। समूह-वेश का भंडारा हुआ। इस प्रकार नित्य नवीन आनंद होने लगा। जब मंदिर बन गया, प्रतिष्ठा हो गई। तब आपने कहा कि इससे हमारा बर्ताव ठीक रहेगा। लोगों ने कहा जैसी आपकी इच्छा।

आप तिन्नी का चावल, अलोना साग, पुदीना तथा काली-मिर्च की चटनी एवं कभी कभी फुलका और मूँग की दाल तीन छटाँक प्रसाद पाते थे। आपके रहने का मकान लोगों की भिक्षा से बना था। आप पीत रंग का उत्तम वस्त्र धारण

किये पर्यंक पर बैठे रहते थे। अष्ट धातु तथा पूजोपहार वस्त्र को छूते न थे।

जब चिरान के महंतजी महाराज ने महलयात्रा की तब यहाँ के कुछ महानुभाव श्रीस्वामीजी के संन्निकट आए और प्रार्थना की सरकार को भद्र (क्षौरकर्म) होना चाहिए। क्योंकि सरकार यदि ऐसा न करेंगे तो मर्यादा कैसे रहेगी। आपने कहा कि श्रीमहाराजजी महल पधारे इसलिये मैं भद्र होऊँ ? क्या इसकी मन्नत मान रक्खी थी ? ऐसा नहीं हो सकता। पुनः जब लोगों ने प्रार्थना की तब आपने निकट उपस्थित श्रीपंडितजी महाराज (श्री स्वामी जानकीवर शरणजी) से कहा कि बच्चा लोगों का आग्रह है अतः तुम जाकर भद्र हो आओ। आप आज्ञा पाते ही गए और भद्र हो स्नान आदि से निवृत्त हो साष्टांग दण्डवत् किया। श्रीस्वामीजी ने ज्योंही भद्र स्वरूप देखा त्योंही हाथ पटक कर कहा कि क्या इसे ही भद्र कहते हैं। महा अमंगल रूप ? आज से हमारे अनुयायी कोई भी भद्र होने के लिये बाध्य नहीं हैं। इस प्रकार सदुपदेश देते एवं परमानंद करते हुए संवत् १९३३ की मार्गशीर्ष कृष्ण पक्ष की सप्तमी को आपने श्री सरयूकुंज में विश्राम किया।

एक दिन श्रीमहात्माजी ने माईजी से कहा कि हमें अचला लँगोटी दिला दीजिए। माईजी ने श्रीगुरुदेवजी से आकर कहा कि उस ब्राह्मण के लड़के को आपने क्या कर दिया वह तो बावला-सा हो गया है। श्रीगुरुदेवजी ने आपको बुलवा भेजा। आप आकर साष्टांग प्रणाम कर खड़े रहे। श्रीमहाराज ने बैठ जाने के लिये कहा तब भी आप नम्र भाव

से खड़े ही रहे। यह देख माईजी ने कहा कि इनकी इच्छा विरक्त होने की है। यह सुनकर श्रीमहाराजजी ने कहा कि बच्चा एक बार घर हो आओ उसके बाद तुम जो चाहते हो वही होगा। आपने श्रीगुरुदेव की आज्ञा मान चलने के पूर्व गुरुजी को साष्टांग प्रणाम किया। लौंग और इलाइची प्रसाद पा श्रीमाईजी से मिलकर आप घर चले। आपके साथ में सूखी रोटी प्रसादी थी। जब आप अपने ग्राम के निकट पहुँचे, तब भक्तराजजी के संबंधी मिले और यह कहने लगे कि ये बैरागी के चेला बनकर आए हैं इसलिए इन्हें सदर दरवाजे से घर में न प्रवेश करने देंगे। यह सुनकर आपने कहा कि हमारा दरवाजा दूसरा होगा। यह कह आपने बेलदारों को बुलवाकर अपने घर में दूसरा दरवाजा फोड़ने की आज्ञा दी। ज्योंही खुदाई प्रारंभ हुई त्योंही संबंधी लोग बहुत घबड़ाए और ग्राम के प्रतिष्ठित लोगों को बुलाया। ग्राम के प्रतिष्ठित लोगों ने भक्तराजजी को समझाया, खुदाई बंद हो गई और भक्तराजजी ने उसी मुख्य द्वार से ही घर में प्रवेश किया। तब घरवाले कहने लगे कि हम लोगों को इनके साथ खान-पान न करना चाहिए क्योंकि ये वैरागी के चेला हैं और हम लोग आचारी वैष्णव हैं। भक्तराजजी ने कहा कि हमारे श्रीगुरुदेवजी की आज्ञा है कि बिना कंठीवाले मनुष्य के हाथ का जल भी न पीना। यह श्रीसीतारामजी की कृपा हुई कि अनायास ही गुरु-आज्ञा के पालन का मार्ग निकल आया। उसके बाद श्रीभक्तराजजी ने कुछ काल तक अटल वैष्णव-वृत्ति से निवास किया। जब घर से चले तब एक किता मकान पं० शिवभजन शिवशंकर को

संकल्प करके दे दिया। श्रीअवध आकर श्रीगुरुजी का दर्शन किया और श्रीगुरुदेव से बहुत प्रार्थना की तब श्रीगुरुजी ने आपको विरक्त संस्कार से संस्कारित किया। तदनंतर आप परमानंद में पगे रहने लगे।

बीच-बीच में कभी-कभी आप तीर्थ-यात्रा के लिये भी जाते थे। एक बार अवन्तिकापुरी उज्जैन का चढ़ाव हुआ। उसमें आप भी वहाँ गए। चढ़ाव देखना तो निमित्त था। वास्तव में आप परम रसिकाधिराज श्रीकृपानिवासजी का स्थान देखना चाहते थे। एवं उनके रहस्य-ग्रंथों का अवलोकन करना था। अतः आप वहीं पर ठहरे। उस समय वहाँ के महंत श्रीराम-कान्ताशरणजी थे। वे अपने घर का रहस्य भली-भाँति जानते थे। और मल्ल-विद्या में बड़े प्रवीण थे। राजधानी में इनकी बड़ी प्रतिष्ठा थी। कई बार इन्होंने विजय भी पाई थी।

श्रीमहंतजी और आपकी बैठक बहुत दिनों तक हुई। एक दिन संयोगवश श्रीमहंतजी ने आपका हाथ पकड़ लिया और पंजा होने लगा। महात्माजी का अमित बल देखकर उन्होंने उनका हाथ छोड़ दिया और कहने लगे कि आपको यह पराक्रम कैसे प्राप्त हुआ? तो आपने कहा कि आप ही का दिया हुआ है। तत्पश्चात् श्रीमहात्माजी ने वहाँ के आचार्य श्रीकृपानिवासजी के उपासना-ग्रंथों को भी बड़े प्रेम से अवलोकन किया। आप कहते थे कि वहाँ पर श्रीशंकरजी का नाम महाकालेश्वर है। सो उस समय महाकाल ही तो आया जो सोया रहा सोया ही रह गया और जो बैठा रहा सो बैठा ही रह गया। इस प्रकार बड़ी

गहरी मृत्यु हुई। कुछ दिन वहाँ रहने के अनंतर आप वहाँ से श्रीअवध चले आए।

एक बार आप नैमिषारण्य की परिक्रमा में गए यह परिक्रमा फाल्गुन में होती है, राम-दल चलता है। इस परिक्रमा की आप बड़ी प्रशंसा करते थे। आप कहते थे कि जिस समय श्रीराम-दल चलता था उस समय किसानों की बड़ी हानि होती थी परंतु कोई तनिक भी चीं चपड़ नहीं करता था। इसी का प्रभाव था कि श्रीभगवत्कृपा से किसानों की खेती डेवढ़ी होती थी। उसी समय की बात है एक दिन आप एक क्षत्रिय जमीदार के यहाँ बैठे थे इतने में आपने देखा कि एक क्षत्रिय-कुमार एक घोड़े पर चढ़े चले जा रहे हैं। श्रीमहात्माजी रूपानन्य थे। क्षत्रिय-कुमार की ओर आपका चित्त आकर्षित हुआ। और आपको यह दोहा स्मरण आया—

नैन हमारे लालची, नैकु न मानत सीख।
जहँ-जहँ देखत रूप-धन, तहँ-तहँ माँगत भीख॥

इस दोहे को सार्थक करते हुए आप उन क्षत्रिय-कुमार की रूप-माधुरी निरखते हुए कुछ दूर तक गए। जब घोड़ा दूर निकल गया और आँखों से ओझल हो गया; तब आप वहाँ से लौटे। और अपना नित्य नियम करके विचरते हुए श्रीअवध लौट आए।

श्रीअवध आकर आपने गुरु-चरणों का दर्शन किया; तथा बाहर से लाई हुई पूजा-सामग्री से उनका पूजन किया। श्रीगुरुदेवजी की आज्ञा पाकर आप श्रीहरिहरशरणजी के साथ परगुरु श्री १०८ श्रीयुगलानन्यशरणजी महाराजकी गुफा में पहुँचे।

परगुरुजी का दर्शन कर साष्टांग दंडवत कर प्रार्थना की कि श्रीरसिकाधिराज जू महाराज मैं अत्यंत दीन क्षीण, तीनों तापों से पीन दुखित अनेक जन्मों से भटका हुआ हूँ मैं आपकी शरण में आया हूँ। मुझे अपने चरणों से न हटाइए। तब महात्माजी के हृदय में एकाएक यह प्रेरणा हुई।

"लखन किला बिच जो पिला, सो कबहूँ न हिला।
मिला स्वामि महबूब गुरु, हिय का पंकज खिला॥"

इसके पश्चात् आपने श्रीमहंत रामोदारशरणजी को दंडवत किया। श्रीमहंतजी ने बड़ी प्रसन्नता के साथ श्रीहरिहर शरण-जी से कहा कि इन्हें श्रीमहाराजजी की सेवा में अपने साथ रक्खो। यह सुनते ही भक्तराज अत्यंत आनंदित हुए। और श्रीहरिहर शरणजी के साथ दोनों भाई सेवा करने लगे। सेवा-कार्य से जो कुछ थोड़ा बहुत समय मिलता उसे आप कविता करने में लगाते। श्रीगुरुदेवजी की कृपा से आपकी कविता-शक्ति को उत्तेजन प्राप्त हुआ। आपको गाने का भी शौक था। श्रीलक्ष्मण किला पर जब उत्सव होता तभी आप श्रीगुरुदेवजी तथा उपस्थित जनता के सम्मुख विलक्षण पदों से युक्त अपना सुमधुर गान सुनाकर लोगों को तल्लीन कर देते। श्रोता-समुदाय आनंद-विभोर हो जाता। इस प्रकार आनंदपूर्वक समय व्यतीत होने लगा।

प्रारब्धवश एक बार आपको कठिन ज्वर हुआ जिसके कारण आप को २२ उपवास करने पड़े। ज्वर के समय में भी आप कविता करते रहते थे। और श्रीहरिहर शरणजी के द्वारा उसे श्रीगुरुदेवजी के पास भेजते जाते थे। आपका ज्वर किसी

भी दवा से शांत नहीं हो रहा था। ३६ वर्ष की अवस्था आपको मार्केश योग था। आपने श्रीहरिहरशरणजी से यह बात कही और कहा कि अब मेरे बचने की आशा नहीं है। यह बात श्रीहरिहरशरणजी ने श्रीमहाराजजी से जाकर कही। श्री महाराजजी आपको देखने के लिये आए और आपकी चारपाई के सिरहाने बैठकर सिर पर हाथ फेरने लगे। और कहा कि बच्चा! तुम मार्केश योग से क्यों घबड़ाते हो अब तो तुम हमारे हो गये हो। जब तक हम चाहेंगे तुम्हें रखेंगे। मार्केश तुम्हारा कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता। तुम शीघ्र अच्छे हो जाओगे। घबड़ाओ नहीं। इसी के पश्चात् श्रीजन्म-भूमि पर के श्रीपंडित सीतारामशरणजी आपको देखने के लिए आए। उन्होंने आपके शरीर का ताप देखकर श्रीहरिहरशरणजी से कहा कि इन्हें मिश्री, मुनक्का और बादाम की ठंढई बनाकर पिला दो। श्रीहरिहरशरणजी ने ठंढई तैयार कर श्रीगुरुदेवजी को भोग लगाकर ज्योंही महात्मा जी को पिलाया त्योंही कुछ देर बाद उनका ताप दूर हो गया। धीरे-धीरे आप अच्छे हो गए। केवल कमज़ोरी रह गई तो यह विचार हुआ कि स्वास्थ्य सुधारने के लिये कहीं बाहर जाकर जलवायु परिवर्तन कर आवें तो शीघ्र स्वस्थ हो जायँ। श्रीगुरुदेवजी की आज्ञा पाकर आप संत श्रीरामदासजी के साथ नैमिषारण्य की ओर चले गए। थोड़े ही दिन में आपका शरीर पूर्ववत् हो गया। आपने नैमिषारण्य से साथ में श्री बालकदासजी सन्त को भी ले लिया और श्रीअवध लौट आए। श्रीगुरुदेवजी सेवा में लग गए। और श्रीबालक-दासजी को चतुर जान श्रीमहन्तजी ने अपनी सेवा में रख

लिया और श्रीसीतारामजी के लीला का प्रबंध कार्य उन्हें सौंपा।

एक दिन किसी कारण से महंत जी विशेष क्रोधित हो रहे थे और श्रीमहात्माजी बड़े महाराजजी को दंडवत करने गए थे कि आपको उन्होंने एक तमाचा मारा, आपके गाल लाल हो गए। आप कुछ नहीं बोले, चले आए। श्री महाराज जी से इसकी चर्चा भी नहीं की। तब से श्रीमहंत जी के हाथ में जोरों का दर्द हो गया यह बात उन्होंने स्वयं आकर श्री महाराज जी से कही। हमने लाला को एक तमाचा मार दिया और वे कुछ भी नहीं बोले तबसे हमारे हाथ में असह्य दर्द हो रहा है। श्रीमहाराजजी ने कहा उसने हम से कुछ नहीं कहा। ऐसा प्रायः हो जाता है अच्छा हो जायगा।

कुछ दिन पश्चात् महंतजी को रीवाँ जाने की आवश्यकता हुई तो उन्होंने श्रीपंडितजी महाराज से निवेदन कर अपने साथ में महात्माजी को ले जाने की आज्ञा प्राप्त की। महात्माजी ने गुरुदेवजी की सेवा में अपने अनुज श्रीभगवंतशरण* को रख

---

* जब आप श्रीअवध आकर विरक्त हो गए थे। तबसे आपके चित्त में यह विचार होता था कि किसी प्रकार भगवंतशरण भी आ जाते तो अच्छा होता। यह विचार कर आपने उन्हें बुला लिया। जिस समय आप गार्हस्थ जीवन में थे और रात्रि में जब दो बजे से भजन पर बैठते थे तो साथ ही साथ इनसे भी भजन कराते थे। आप दोनों भाइयों में बड़ा स्नेह था। जिस समय श्री भगवंतशरणजी शरणागत होने लगे। उस समय श्रीगुरुदेवजी ने कहा कि यदि तुम फारसी पढ़ने का वादा करो तो मैं तुम्हें चेला बना सकता हूँ। उन्होंने फारसी पढ़ने की प्रतिज्ञा की। अतः शरणागत किए गए। और श्रीगुरुदेवजी ने स्वयं उनको फारसी पढ़ाना प्रारंभ किया। वे उर्दू, फारसी एवं संस्कृत के अच्छे पंडित थे। और उर्दू, फारसी तथा हिंदी में अच्छी कविता करते थे।

दिया। महंतजी अपना कार्य समाप्त कर रीवाँ से लौटने लगे। तब श्रीमहात्माजी ने महंतजी से कहा कि हमने चित्रकूट का दर्शन अभी तक नहीं किया है। आज्ञा हो तो कर आऊँ। महंतजी ने प्रसन्नतापूर्वक अनुमति दे दी। महात्माजी चित्रकूट पहुँचे। यहाँ पहुँच कर आपको परमानंद प्राप्त हुआ। आपने चित्रकूट के सभी प्रधान तीर्थों के दर्शन किए। 'श्रीमंदाकिनीजी में श्रीरामघाट पर स्नान किया। कामतानाथजी की परिक्रमा की, श्रीअनुसूयाजी का दर्शन किया, श्रीगोदावरीजी, श्रीभरतकूप, श्रीराम-शय्या और श्रीहनुमानधारा का दर्शन कर जब आप श्री-जानकी-कुंड पर आए तो वहाँ की विलक्षण शोभा अवलोक कर आपकी यह इच्छा हुई कि यहाँ पर कुछ दिन रहना चाहिए परंतु तत्काल ही श्रीगुरु-सेवा का स्मरण हो आया। फिर आप कैसे रुक सकते थे। फाल्गुन का महीना था उन दिनों चित्रकूट में औंरे बहुत बड़े-बड़े होते हैं। औंरा को देख महात्मा जी को श्रीगुरुदेवजी द्वारा प्रायः पढ़ा जानेवाला वैद्यक की निम्नलिखित वचन स्मरण आया—

'धात्रीफलं सदा पथ्यं अपथ्यं बदरीफलम्।' इत्यादि

अतः आप श्रीगुरुदेवजी के लिए औंरों का एक गट्ठर साथ में लेकर वहाँ से चल दिए। जिस समय काशी जी में पहुँचे उस समय वहाँ पर पंचकोशी की परिक्रमा हो रही थी। इस परिक्रमा में लीला होती हुई परिक्रमा होती है और रामनगर में जो स्वरूप बनते हैं वे ही इस लीला में भी बनते हैं। जिस दिन महात्माजी काशी पहुँचे उस दिन शिवपुर में मुकाम था। जब आप स्वरूपों के निकट जाने लगे। तब लोगों

ने आपको स्वरूपों के पास जाने से रोका। आपने कहा कि हमसे उनसे खूब जान-पहिचान है और आप चल दिए। उस परिक्रमा के मुखिया श्रीभागवतदास थे। जिन्होंने श्रीतुलसीदास जी के बारहो ग्रंथों का संशोधन कर छपवाया था महात्मा जी को देखकर वे बड़े प्रसन्न हुए। उस समय स्वरूप लोग विराज रहे थे, गान हो रहा था। श्रीभागवतदास जी ने महात्मा जी से भी कुछ गाना सुनाने का अनुरोध किया। महात्मा जी ने श्री स्वामी युगलानन्यशरण जी महाराज की पदावली के पदों में से होली के कुछ पद सुनाए आपका सुमधुर गान सुनकर संपूर्ण श्रोता-समुदाय मुग्ध हो चित्रवत् हो गया। अबीर उड़ने लगी बड़ा आनंद हुआ। लोगों ने श्री भागवतदास जी से प्रार्थना की कि वे महात्मा जी से परिक्रमा में साथ रहने के लिये निवेदन करें। परंतु महात्माजी ने कहा — विलम्ब करने से श्रीगुरुसेवा से विमुख हो जाऊँगा। यह कहकर आप वहाँ से चल दिए।

श्री अवध पहुँचकर आपने श्री गुरुदेव जी को साष्टांग दंडवत कर औंरा रखकर कहा कि यह औंरा चित्रकूट का है। यह अपूर्व निष्ठा देख श्री गुरुदेव जी इनपर बहुत प्रसन्न हुए।

इसी बीच आपकी पुत्री श्रीरामदुलारी जी का विवाह ठीक हुआ। श्री गुरुदेव जी ने आज्ञा दी कि जाओ विवाह कर आओ। विवाह में तुम्हें कुछ देने की आवश्यकता नहीं। केवल निमित्त मात्र जाओ। कबीरदास जी का कथन है—

"साधु-धन जो दुनिया खाय।
सो तो अवसि दरिद्र हो जाय।"

जब आप चले तो किसी ने कहा कि आज तो पश्चिम दिशा के लिये दिग्शूल है। आपने उत्तर दिया कि दिग् शूल का अर्थ है नेत्रों की पीड़ा। नेत्रों को कष्ट तो उसी समय हो गया जब श्री गुरुदेव एवं श्री अवध-दर्शन से विमुख हुआ। वह तो यहाँ से चलने पर बराबर ही होगा। यह उत्तर सुनकर लोग आश्चर्य चकित हुए। आप चल दिए।

श्रीगुरुदेवजी की कृपा से श्रीरामदुलारी का विवाह-कार्य सानंद संपन्न हुआ। जिस समय समधी मड़वे में आए उस समय उन्होंने आपसे पूछा कि आप धोती क्यों नहीं पहनते? इसके उत्तर में आपने कहा कि आप लोग रुपए कमाने में लगे रहते हैं। अतः आप दस हाथ की धोती पहन सकते हैं। हम तो कुछ करते नहीं दस हाथ कपड़े में तो हमारा पहनने ओढ़ने दोनों का कार्य चलता है। इसके बाद समधीजी ने पुनः कहा कि आप स्वयं अलग क्यों बनाते खाते हैं। सबके साथ क्यों नहीं खाते इसके उत्तर में आपने निम्नलिखित पद सुनाया—

भावै मोहिं नाहिं जगत के नतवा।
हिय सीठे मीठे मुख बोलत, निसिदिन काल लगाए घतवा॥
निज सुख के प्रीतम मग के ठग अंत समय पूछै नहिं बतवा।
हमरो लेत अधम सठ सरबस अपनो देत न भूरो पतवा॥
अति अगाध अपराधी बंचक रंचकहू नहिं प्रभु-पद रतवा।
रामवल्लभाशरण दुखित लखि सतगुरु दीन्हो अभय लिखि खतवा॥

यह पद सुनते ही समधीजी का संदेह दूर हो गया। कार्य समाप्त होने पर आप गुरु-सेवा में पुनः आ पहुँचे। श्रीराम-दुलारीजी कुछ दिनों के बाद श्रीअवध आईं और श्रीगुरुदेवजी

की शरण हुईं। श्रीगुरुदेवजी की ऐसी कृपा हुई कि वे थोड़े ही दिन बाद इस संसार से मुक्त हो गईं। महात्माजी ने जब यह सुना तब आपने कहा कि रामदुलारी भाग्यशालिनी थीं जो मुक्त हो गईं। यह संबंध भी विच्छेद हो गया। अब उन्होंने श्रीगुरुदेवजी से श्रीअवध वास अचल करने के निमित्त प्रार्थना की। श्रीगुरुदेवजी ने कहा—'जो इच्छा रखिहौ मन माहीं। हरिप्रसाद कछु दुर्लभ नाहीं। आशीर्वाद सुन आपने साष्टांग दंडवत किया।

सावन का महीना था रात को बारह बजा था। बाज़ार से कुछ लाने के लिये आप स्वर्ग-द्वार जा रहे थे। लक्ष्मण किला के फाटक से निकल कर आप पूर्व की ओर ज्योंही मुड़े त्योंही एका-एक आपने तेज प्रकाश देखा। आप कुछ देर तक यह अनुमान लगाते रहे कि यह प्रकाश क्यों हो रहा है। अंत में आपने यही निश्चय किया कि इस मार्ग से न जाना चाहिए और आप दक्षिण-मार्ग से गए और कार्य पूरा कर लौट आए। आपने श्रीगुरुदेव जी से उक्त वृत्तांत कहा। उसे सुनकर गुरुजी ने कहा कि यह श्रीलक्ष्मण किला है श्रीलक्ष्मणजी शेषजी के अवतार हैं अतः यहाँ पर मणिधर सर्प रहते हैं। तुमको उन्हीं का दर्शन हुआ है।

भादों का महीना था। पानी बरस रहा था। संयोग से उस दिन श्रीगुरुदेवजी के लिये दंत-धावन नहीं था। आप लालटेन लेकर फैजाबाद जानेवाली सड़क के मार्ग में रानोपाली के पास ज्योंही पहुँचे त्योंही काले सर्पों का एक जोड़ा बड़ी तेजी से फुफकारता हुआ आपकी ओर दौड़ा। उनसे त्राण पाने का कोई मार्ग न अवलोक कर आप लालटेन जमीन पर रख हाथ

जोड़कर खड़े हो गए और उन सर्पों से निवेदन किया कि हम आप लोगों का किसी प्रकार कोई नुकशान करने के लिये नहीं आए हैं। हम गुरुदेवजी के लिये प्रभाती लेने आए हैं। आज्ञा हो तो प्रभाती लेकर चले जायँ। (श्रीगुरुदेवजी रात को दो बजे उठकर स्नान आदि से निवृत्त हो पूजन पर बैठ जाते थे) यह सुन वे दोनों सर्प एक किनारे हट गए। और श्रीमहात्माजी वृक्ष पर चढ़ प्रभाती तोड़कर चले आए और खिड़की के रास्ते से प्रभाती डाल दी। प्रातःकाल पूजनोपरांत श्री गुरुदेवजी ने पूछा कि प्रभाती किसने गिराई थी। तब आपने रात की वह घटना सुनाई उसे सुन गुरुदेवजी ने कहा ऐसा न किया करो। आपने कहा। जिस पर आपकी कृपा है। उसका कुछ भी बिगड़ नहीं सकता।

एक बार महात्माजी की इच्छा हुई कि श्रीमिथिलाजी का दर्शन करना चाहिए। यह इच्छा आपने श्रीगुरुदेवजी से प्रगट की। श्रीगुरुदेव ने कहा—

मिथिला बिनु नाते ना दरसै।

परंतु अपने आचार्यों का यह सिद्धांत है।

इहाँ उहाँ मैं भेद न रंचक बंचक भेद बखानै।

उपरोक्त पद्यांशों को सुनाकर आज्ञा दी कि मिथिला-यात्रा अवश्य कर आओ। यह आज्ञा पा आप बड़े उत्साह-पूर्वक यात्रा की तैयारी करने लगे। इसी बीच एक अपूर्व घटना घटी। एक महात्मा श्रीलक्ष्मणदासजी थे*। उनके पास श्रीहनुमानजी की एक

---

* आपका शरीर दक्षिण देश का था। आप रामायणजी के सर्वोत्तम वक्ता थे। गयाजी में आपका स्थान गोलपत्थर के पास प्रसिद्ध है। वहाँ संतसेवा

मूर्त्ति थी एक बार आपने रात को सोते हुए स्वप्न में यह देखा कि वह मूर्त्ति कहती है कि श्रीरामवल्लभाशरण जी श्री मिथिला जा रहे हैं हमें उनके साथ कर दो। दूसरे दिन जब शृंगार-कुंज के महंत श्रीश्यामसुंदर शरणजी उनके पास आए तो उन्होंने स्वप्न की घटना उन्हें सुनाई। श्रीश्यामसुंदरशरणजी ने कहा कि श्रीरामवल्लभाशरण जी मिथिला जा रहे हैं यह मुझे मालूम है। उनके साथ श्रीहनुमान जी की मूर्त्ति भेज दीजिए। यह सुन श्रीलक्ष्मणदासजी ने मूर्त्ति को सिंहासन में रखकर कुछ दक्षिणा सहित उसे श्रीरामवल्लभाशरणजी के पास भेज दिया। जब महंतजी ने श्रीरामवल्लभाशरणजी को मूर्त्ति देकर उन्हें उक्त समाचार सुनाया तो उसे सुनकर उन्हें परम प्रसन्नता हुई और उन्होंने इसे हनुमानजी की बड़ी कृपा समझा। आप श्रीजनकपुर के लिये रवाना होकर सीतामढ़ी होते हुए वहाँ पहुँचे। और विहारकुंड पर आसन जमाया। श्रीकिशोरीजी का स्थान घूम घूम कर देखा। यहाँ पर आपने एक नवीन पद निर्माण/कर संतों को सुनाया—

मन बस अब कीन्हो अवध ललना।
चंचल चख चमकाय छबीले चेटक करि मेरो हिय छलना॥
चित बिच करत सुलाक हमारे नाक बुलाक अधर हलना।
कुंडल लोल कपोल अलक छुटि नागिनि डसी परत कल ना॥

अच्छी होती है। जब आप वृद्ध हुए तो स्थान एक शिष्य को सौंप श्रीअवध लक्ष्मण किला पर आए और बड़े प्रेम से रखे गए। यहाँ भी मंदिर में आप रामायण की कथा कहते हुए आपने शरीर छोड़ा।

मृदु मुसुकनि गारुडि मंत्र करि नाहिंत प्रान चहत चलना ।
श्रीयुगलबिहारिनि धाय लगो गर हे सिय प्यारे बिछुर पलना ॥

इस पद को श्रवण कर श्रीजनकपुरवासी संत बड़े प्रसन्न हुए। और आपका बहुत सम्मान किया। आपने वहाँ के प्रधान तीर्थ श्रीगंगा-सागर में स्नान कर श्रीराममंदिर का दर्शन किया। फिर जानकी - मंदिर में आए। श्रीकिशोरी जी का दर्शन किया। और पुजारीजी से कहा कि हमें उस मूर्त्ति का दर्शन कराइए जिनकी नाक छिन गई है। यह प्रसंग आप श्री गुरुदेवजी से इस प्रकार सुन चुके थे—'यहाँ पर एक बड़े महात्मा सूर किशोर जी हुए हैं उन्होंने बहुत से कवित्त तथा पद बनाए हैं। वे श्री किशोरी जी को पुत्री भाव से मानते थे। उन्हीं महात्मा ने श्री युगल सरकार जी की एक मूर्त्ति स्थापित की थी। एक दिन शयन कराते समय पुजारी जी नथ उतारना भूल गए। जब आधी रात का समय हुआ तो सूरकिशोरी जी को स्वप्न हुआ कि बाबा नथ बड़ा भारी है। इससे नाक दुखती है। सूर किशोर जी की आँख खुल गई। उन्होंने पुजारी को जगाकर मंदिर खुलवाया तो क्या देखते हैं कि नथ गिर पड़ी है। और नाक छिन गई है।'

पुजारी ने महात्माजी को उस मूर्ति का दर्शन कराया। दर्शन कर आप परम आनंदित हुए।

कुछ दिन श्रीजनकपुर में रहकर महात्माजी अवध लौट आए। मिथिला से लाई हुई वस्तुओं द्वारा गुरुजी का पूजन कर मिथिला का संपूर्ण वृत्तांत उन्हें सुनाया। और पूर्ववत् श्रीगुरुदेव की सेवा में रहने लगे।

एक दिन श्रीगुरुदेवजी ने आपसे पूछा कि रामवल्लभाशरण! तुम्हारे पास दही है। आपने कहा—'हाँ महाराज' गुरुदेवजी ने कहा कि दही की ठंढई पिलाओ। महात्माजी ने अयोध्या का सारा बाजार दही के लिये छान डाला। परंतु दही नहीं मिला। तब आप एक तेज एक्का कर फैजाबाद गए और वहाँ से दही लाकर ठंढई तैयार कर श्री गुरुदेव को पिलाया। ठंढई तैयार करने में विलम्ब हो गया था। श्रीगुरुदेवजी ने पूछा विलंब क्यों हुआ। तब आपने उसकी व्यवस्था कही। श्रीगुरुदेवजी ने कहा कि तुम्हारे पास चीज न रहते हुए भी कह देते हो कि हैं। इससे परेशानी होती है। आपने कहा कि आपकी कृपा से ऐसी कौन-सी वस्तु है जो न मिल सके। सभी चीजें आपकी कृपा से सुलभ हैं।

महात्माजी का लीला-स्वरूपों में बड़ा प्रेम था। एक दिन की बात है कि पत्थर मन्दिर वाले श्रीभगवानदासजी आए। स्वरूप लोग साथ में थे। जाड़े का दिन था। परंतु उनके पैरों में जूता न था। यह देख महात्माजी के हृदय में यह बात आई कि यदि इनके पैरों में जूता होता तो अच्छा होता। श्रीगुरुदेवजी को महात्माजी के हृदय की इच्छा मालूम हुई तो उन्होंने आज्ञा दी कि अमुक स्थान पर रुपए रखे हैं। लेकर स्वरूप लोगों को जूता ला दो। दूसरे दिन महात्मा जी ने बाजार से जूता लाकर बड़े प्रेम से स्वरूपों को पहनाया।

एक बार श्री गुरुदेव महाराज की कंठी बढ़ गई थी। बुलाया—कोई संत है।' आपने कहा—'आया सरकार।' और आकर खड़े हो गए। श्रीगुरुदेव महाराज ने कहा कि कंठी

बढ़ गई है इसे पोहाना है। आपने कंठी ले ली और सुंदर पोहवाकर पूजावाले घर में पूजा की डलिया में रख दिया। जब प्रातःकाल तीन बजे श्रीपंडितजी महाराज पूजा करने गए तब कंठी देखकर बड़े प्रसन्न हुए। और कंठी हाथ में लिए हुए आपको बुलाया। पूछा—'क्या पोहवाई दिया ?' आपने कहा—'सरकार दे दिया गया।' श्रीगुरुदेव महाराज ने कहा कि बताओ। पुनः आपने कहा कि सरकार दे दिया गया। तब गुरुदेव महाराज ने डलिया में से पैसे ले लिये। और आपसे कहा—'लो एक, दो, तीन······आठ। यह अष्ट सिद्धि है।' और एक पैसा दूसरे हाथ में था उसे देकर कहा कि लो नवोनिद्धि। आपने पैसे लेकर साष्टांग दण्डवत किया और कहा--"अष्ट सिद्धि नव निद्धि प्रमानी। कंठी की न्योछावर जानी।" वे पैसे भी पूजन के संदूक में हैं।

कलकत्ते के बाबू चन्द्रकुमारसिंह (श्रीमहात्माजी के गुरुभाई) आए थे। उन्होंने महात्माजी से कहा--भाई साहब, हमने श्रीमहाराजजी के लिये खड़ाऊँ बनवाई थी परंतु लाना भूल गया। जाकर भेज दूँगा। जब बाबू साहब कलकत्ते गए। तब इधर श्रीगुरुदेव महाराज की खड़ाऊँ जीर्ण देखकर आपने श्रीचन्द्रकुमारसिंहजी के पास पत्र लिख दिया कि खड़ाऊँ भेजने के लिये आप कह गए थे शीघ्र भेज दीजिए। उन्होंने वह खड़ाऊँ का पार्सल श्रीगुरुदेवजी महाराज के नाम से भेजा। जब गुरुदेव महाराज ने पार्सल खोला। तो उसमें एक पत्र था जो महात्माजी के नाम था। उसमें लिखा था कि आपके लिखे मुताबिक खड़ाऊँ भेजता हूँ। स्वीकार कीजिएगा।

श्रीगुरुदेव महाराज ने महात्माजी को बुलाकर कहा लो खड़ाऊँ। तुमने चंद्रकुमारसिंह के यहाँ से मँगाई है। आपने कहा कि उन्होंने कहा था कि मैं लाना भूल गया हूँ जाकर भेज देंगे। सरकारी खड़ाऊँ जीर्ण भी हो गई थी इसलिए मैंने लिख दिया था। श्रीगुरुदेव महाराज ने कहा कि यह तुम्हें नहीं मालूम है—"मँगिबो भलो न बाप से जो विधि राखै टेक। जब बाप से भी माँगना मना किया गया है तो फिर दूसरे की बात क्या ? माँगना और मरना बराबर होता है। गोस्वामी जी की यह शब्दावली—'तुलसी कर पर कर करो, करतर कर न करो। जा दिन करतर कर करो ता दिन मरन परो।' मैं इसे नहीं पहिनूँगा। और आज से फिर किसी से न माँगना।" इस आज्ञा का पालन आपने पूर्ण रूप से किया और कभी किसी से कुछ नहीं कहा। प्रायः आप अपने शिष्यों को भी यही उपदेश देते थे कि माँगना बहुत बुरा है।

एक बार श्रीगुरुदेवजी ने आपसे कहा—'बच्चा क्या तुम्हारे पास कोई ऐसी खटिया है जिसे मैं जहाँ चाहूँ सरलता से उठा कर रख सकूँ।' आपने कहा कि हाँ महाराज है।' यह कहकर आप अपने बड़े गुरु भाई श्रीबाबा हरिहरशरणजी को सेवा का कार्य सौंपकर फैजाबाद को चले। चलते समय उन्हें सब बातें समझा कर कहा मैं शीघ्र ही वहाँ से लौटता हूँ। और फैजाबाद से नया पावा खरदवाकर हल्की-सी खटिया बनवा कर ले आए और श्रीसरयूजी में स्नान करा उसे आपने रख दिया। श्रीगुरुदेवजी ने उसे देखा तो वे बड़े प्रसन्न हुए। और उन्होंने कहा यह तो एकदम नई है। आप चुप रहे।

श्रीसद्गुरुसदन अयोध्या
श्री ५ स्वामी रामवल्लभाशरणजी
श्री १०८ जानकीवरशरणजी

बाबा श्रीहरिहरशरणजी ने कहा ये तैयार कराकर लाए हैं। श्रीगुरुदेवजी ने कहा कि तुम्हारे पास कोई वस्तु न रहते हुए भी कह देते हो कि हाँ है। और उसके लिये परेशान होते हो। आपने कहा कि आपके चरणों की कृपा से दास के लिए ऐसी कौन-सी वस्तु है जो सुलभ न हो ?

एक दिन की बात है कि श्रीगुरुदेव महाराज बैठे थे और भी कई सज्जन उपस्थित थे। उन्होंने आवाज दी—कोई संत है ? आपने कहा —'आया सरकार।' और निकट आकर खड़े हो गए। श्रीगुरुदेवजी ने कहा कि तुम ठंढई कितनी देर में तैयार कर सकते हो ? आपने कहा—'जितनी देर में सरकारी आज्ञा हो।' श्रीमहाराजजी ने कहा—'तीन बजने में तीन मिनट बाकी हैं। क्या तीन मिनट में तैयार कर सकते हो ?' आपने कहा—'हाँ, जब आप चलने लगे तब श्रीमहाराजजी ने कहा कि घड़ी देख लो। यदि तीन बजे के बाद आवेगो तो मैं ठंढई नहीं पीऊँगा। आपने कहा देख लिया है। वह चले आए और बड़े प्रेम से ठंढई तैयार कर ले आए। श्रीमहाराजजी ने कहा कि अब ठंढई हम नहीं पिएँगे। आपने कहा—क्यों सरकार ? उत्तर दिया-घड़ी देखो। आपने कहा—देखा है। कहा कि कितने बजे हैं। उत्तर दिया—तीन बजने में तीन मिनट बाकी है। कहा—हाँ ! इसमें तो तीन बज कर पंद्रह मिनट हो गए। वह कौन सी घड़ी है जिसमें तीन बजने में तीन मिनट बाकी है ? आपने हाथ जोड़कर नतमस्तक हो उत्तर दिया—वह कृपा की घड़ी है। फिर क्या था। श्रीमहाराजजी ने मंद मुसकान के साथ ठंढई ले ली और वाह कहकर पी गए।

श्रीमहाराजजी ने आपसे कहा—पेड़ा ले आओ। आप शीघ्रता से स्वर्गद्वारी बाजार के लिये चले। रास्ते में एक कंकड़ पैर में चुभ गया। आपने पैर के जख्म की परवा न कर शीघ्रता से पेड़ा लाकर श्रीमहाराजजी को दिया। देकर बाबा हरिहरशरण जी महाराज के पास आए। बाबाजी ने कहा—दाई, पैर में क्या हुआ है? आपने कहा—कंकड़ गड़ गया है। उन्होंने कहा—यहाँ रास्ते में कंकड़ नुकीले हैं सँभाल कर चला करो। आपने कहा—

औध मग काँकर पै आकर मनीन वारौं,
जाकर प्रभाव पर प्रभाकर करोर को।
आकर विलोकि मनसाकर प्रमोद पाय,
छाकर घनश्याम बरसाकर सुजोर को।
अनत न जाकर सुखाकर रहाकर ह्याँ,
चित जो चहा कर लहाकर चितचोर को।
युगलबिहारिनि कहा कर तू सीताराम,
दृगन लखाकर पिय नृपति-किशोर को।

बाबा ने कहा—वाह भैया!

श्रीबैजनाथजी* किले पर श्रीपंडित महाराज के सत्संग के लिये प्रायः आया करते थे। एक दिन वे और उनके साथ में पं० कालीप्रसादजी आए। और बहुत देर तक श्री पंडितजी महाराज के निकट सत्संग कर लौटे। तब पंडित कालीप्रसादजी से पूछा कि क्यों पंडितजी तिलोकपुर निवासी श्री पंडित गणेश प्रसादजी की कोई संतान है? उन्होंने कहा—हाँ, उनके दो पुत्र

* गोस्वामी तुलसीदासजी के ग्रन्थों के प्रसिद्ध टीकाकार बाराबंकी जिला निवासी थे। उन्होंने महात्माजी के पिताजी से भी अध्ययन किया था।

हैं और दोनों यहीं हैं। उन्होंने कहा कि ज़रा उनको किसी दिन दिखला दीजिएगा। यह कहते हुए मंदिर के पीछे पहुँचते ही देखा कि आप दोनों हाथ में दो घड़े लिए डोरी को फँदियाकर गले में डाले हुए आ रहे हैं। पंडित कलीप्रसादजी ने कहा कि पंडितजी के यही बड़े लड़के हैं। श्रीबैजनाथजी ने कहा—बच्चा, जरा इधर आओ। आप निकट गए। तब बैजनाथजी ने पूछा कि आपका क्या नाम है? आपने कहा कि रामवल्लभाशरण। इतने में पंडितजी ने कहा कि ये पद्य रचना भी करते हैं। तब वैजनाथजी ने कहा कि अपना बनाया हुआ कोई पद हमें भी सुना दो। आपने कहा—

तूँ झमकि झमकि भर गगरा।
श्री सरयूबर कूप चूप ह्वै झुकि-झुकि झोंकनि पगरा।
श्रीगुरु महल टहल करु निसि दिन सहलदहल जहि झगरा॥
श्रीसीतावर नाम निरंतर सुमिरन करु मति अगरा।
नाम प्रताप अगस्ति महत् अति सोखि लेहिं भवसगरा॥
रामवल्लभाशरन अहर्निसि बसै अयोध्या नगरा।

यह सुन बैजनाथजी ने कहा—वाह भैया! अच्छा जाओ श्रीमहाराजजी की सेवा करो। कहकर बैजनाथजी उधर गए और आप श्रीसरयू कूप* गए। जल लेकर जब आप लौटे और जल रख चुके तब श्रीगुरुदेव महाराज ने आपको बुलाया और आपसे पूछा—कि गगरा झगरा किससे कर रहे थे। आपने कहा श्री वैजनाथजी थे। महाराजजी ने कहा—हाँ, वे तो अभी यहाँ आये थे। आपने कहा कि उन्होंने बुलाकर नाम पूछा। हमने

* यह कूप श्रीसद्गुरु-सदन के बगल वाले घाट पर है।

नाम बतलाया तब उनके साथ के दूसरे सज्जन ने कहा कि ये पद भी बनाते हैं। यह सुन बैजनाथजी ने कोई अपना बनाया पद सुनाने के लिये मुझसे कहा। तब सरकारी प्रेरणा से जो पद फुरा उसे सुना दिया। सुनकर वे उधर गए और मैं इधर आया। श्रीगुरुदेव महाराज ने कहा कि क्या पद है कहो। आपने गुरुदेव महाराज को उपर्युक्त पद सुना दिया। जिसे सुनकर श्री महाराजजी ने कहा कि श्रीवैजनाथजी ने कितने ही ग्रन्थों का अध्ययन किया और न जाने कितनी कविताएँ एवं कितने ग्रन्थों की टीकाएँ लिखीं पर गगरा और झगरा की रचनाओं की कल्पना उन्हें न हुई होगी। हुई तो तुम्हें। कह मुसकराते कृपा कटाक्ष से देखा।

एकबार श्रीगुरुदेवजी झूलन कुर्सी पर विराजमान थे। पास में श्रीश्रृंगार-कुंज के महंत श्रीश्यामसुंदरशरणजी बैठे हुए थे। गुरुदेवजी के हाथ में एक लोहे का टूटा हुआ कब्जा था। आपने श्रीमहंतजी से कहा कि लो यह नोट अपने पास रक्खो। महंतजी ने कहा कि इसे लेकर मैं क्या करूँ इसे आप श्रीरामवल्लभाशरणजी को दे दीजिए। श्रीगुरुदेवजी ने कहा कि इसे तुम अपने पास रखो। नोट की आवश्यकता तो महंतों को होती है। वह क्या करेगा। महंतजी ने कहा कि नहीं उन्हीं को दीजिए और उन्होंने आपको बुलाया। और कहा कि देखिए आपके गुरुदेवजी क्या कहते हैं। श्रीमहाराजजी ने कहा कि यह नोट महंतजी का है इसे रखो। आपने उसे रख लिया जो कि अभी तक श्रीसद्गुरु-सदन के पूजन-गृह में मौजूद है।

किसी दिन महाराजजी कुर्सी पर विराजमान थे। महंत

श्री श्यामसुंदरशरण जी बीच द्वार पर बैठे थे। इतने में ही आप दोनों हाथों में सरयू जल से भरे हुए दो घड़े लिये हुए पहुँचे। आपने श्रीमहंतजी से कहा कि भाई साहब ज़रा सा हट जाइए मैं जल ले जाऊँ। महंतजी ने कहा कि मैं क्यों हटूँ तुम चले जाओ। श्रीगुरुदेवमहाराज ने कहा कि कैसे जायँ? आप तो रास्ते में बैठे हैं। महंतजी ने कहा कि क्या हाथी-घोड़ा साथ में है कि विशेष राह की आवश्यकता है? यह कहकर ज़रा झुक गए। आप ज्योंही पीठ पर से जाने लगे। त्योंही महंतजी ने कहा कि श्रीरामवल्लभाशरण यदि एक बूँद भी जल पीठ पर गिरा तो तुम नर्क में ही जाओगे। यह सुनते ही श्रीगुरुदेव महाराज बोले कि नर्क क्यों जायगा। महंतजी ने कहा कि नर्क न जायँगे तो क्या स्वर्ग जायँगे? श्रीमहाराजजी ने कहा कि स्वर्ग क्या करने जायगा? इस पर महंथजी ने कहा कि न तो नर्क जायँगे न स्वर्ग तो क्या त्रिशंकु की भाँति अधर में लटके रहेंगे? यह सुनते ही श्रीमहाराजजी ने कहा कि त्रिशंकु के समान लटकने की क्या आवश्यकता? ये तो वहाँ जायँगे जहाँ इनके गुरुबाबा जायँगे। यह सुनकर आप बड़े कृतार्थ हुए। इस घटना को आपने स्वनिर्मित कई पदों में अंकित किया है। और कहा भी करते थे।

किले के महंत श्रीरामउदारशरण जी महाराज जब विशेष अस्वस्थ हो चले तब श्री पंडितजी महाराज से कहा कि भावी महंत का चुनाव सरकार कर देते तो अच्छा था। श्रीमहाराज-जी ने कहा कि आप जिसे कहें उसे चुन दिया जाय। महंतजी उस समय चुप रहे। और एकांत में महात्माजी से कहा कि

लाला * हमारा शरीर लाचार होता जा रहा है। अतः दूसरे महंत का चुनाव होगा हम श्रीमहाराज जी की तुम्हारी सेवा से बड़े प्रसन्न हैं। हमारा विचार है कि तुम्हें चुन दिया जाय। आपने कहा कि आपकी बड़ी कृपा है परंतु मैं घर से यह सोच-कर न चला था कि जाकर किले पर श्रीमहाराजजी का शरणागत होऊँगा और वहाँ का महंत बनूँगा। मैंने तो इसलिए घर छोड़ा कि श्रीमहाराजजी की सेवा कर इस शरीर को काम में लाऊँ। अतः हमारे ऊपर आपकी यही बड़ी कृपा होगी कि हमें श्रीमहाराजजी की सेवा में रहने दें और मुझे कुछ न चाहिए। महंतजी ने आपको अनेक प्रकार से समझाया परंतु आपने एक नहीं माना और महाराजजी की सेवा की ही प्रार्थना की। जब आप राजी न हुए तब महंतजी महाराज श्रीपंडितजी महाराज के पास आए। उस समय श्रीपंडितजी महाराज कुर्सी पर विराजमान थे। (बाँया पैर जमीन पर था और दाहिना पैर बाएँ जंघे पर रखे हुए थे)। महंतजी आए और साष्टांग दंडवत कर बैठ गए। स्थिर हो श्रीमहाराजजी से कहा कि मैंने श्रीरामवल्लभा-शरणजी से बहुत कुछ यहाँ की महंती के लिये कहा क्योंकि वे मुझे उपयुक्त जान पड़े थे। परंतु वे राजी नहीं होते हैं। श्रीमहा-राजजी कुछ देर चुप रहे पश्चात् कहा कि तीन बातें—अव्वल रामवल्लभाशरण साधारण साधु नहीं है। जहाँ वह (दाहिने चरण को हिलाकर) पैर हिला देगा वहाँ कितने महंताधिराज हो जायँगे। दोयम जो हमारा सच्चा चेला होगा वह किले के टुकड़े की ओर ताकेगा नहीं। और सोयम जो बात होगी उसे हम

* श्रीकिले के महंतजी महात्माजी को लाला कहा करते थे।

जानते हैं। आप अब जिसे चाहें उसे कहें मैं चुन देता हूँ। पश्चात् श्रीमहंतजी ने अपने शिष्य पुजारी श्रीलखनलालशरणजी का नाम कहा और श्रीमहाराजजी ने स्वीकार कर उनके नाम वसीयत लिख दी। ❊ पश्चात् श्रीलखनलालशरणजी महंत बनाए गए। जो श्रीपंडितजी महाराज के सामने छः महीने महंत रहे। इस घटना को जब श्रीसद्गुरु-सदन बन गया तब श्रीश्यामसुंदर-शरणजी महाराज महंत शृङ्गार-कुंज ने श्रीमहात्माजी से कहा कि भाई साहब उपर्युक्त घटना में जो महाराजजी ने तीसरी बात गुप्त रखी थी वह यही सद्गुरु-सदन है क्योंकि उस समय मैं वहीं उपस्थित था। ऐसी अनेक गुरु-सेवा संबंधी घटनाएँ हैं।

श्रीमहात्माजी के गुरु भाई (गृहस्थ) सुलताँपुर-निवासी बा० हरचरणलाल किसी रियासत में कार्यकर्ता थे। उसी रियासत में एक यूरोपियन चित्रकार आया था और उक्त राजा के यहाँ के कई चित्रों का इनलार्जमेंट किया, उसे काफ़ी काम मिले। उसने बा० हरचरणलाल से कहा कि हम एक चित्र आपका भी बनाना चाहते हैं। उन्होंने उत्तर दिया— मेरा चित्र क्या होगा, हमारे श्रीगुरु महाराज श्रीअयोध्याजी में हैं आप उनका चित्र बना दीजिए। वह राजी हो गया। दोनों अयोध्याजी आए उस समय श्रीपंडितजी महाराज श्रीसिया-

---

❊ किले के अध्यक्ष श्रीपंडितजी ही महाराज थे परंतु आपने व्यावहारिक कार्य से भजन में भंग होने का विचार कर श्रीमहाराज जानकीजीवनशरणजी उनके शरीर छूटने पर श्रीमहाराज रामप्रियाशरणजी तथा उनके अवधवास के पश्चात श्रीरामउदारशरणजी को चुना था। अतःजिन्हें चुना वे ही महंत के नाम से प्रसिद्ध हुए। क्योंकि आपने अपने ही समय में चार महंत बनाए।

सोहाग बाग के श्रीसरयू-कुंज में विश्राम कर रहे थे। बा० हरचरणलालजी ने महात्माजी से कहा कि श्रीमहाराजजी का कोई छोटा चित्र आप दें उसे बड़ा बना करके ये साहब भेज देंगे। आप यह सुनकर श्रीगुरुदेव महाराज के निकट पहुँचे और चरणों के पास जाकर निवेदन किया कि हे सरकार सुलतांपुर के श्रीहरचरणलालजी आए हैं उनके साथ एक साहब हैं। वे कहते हैं कि श्रीमहाराजजी का कोई चित्र दीजिए साहब द्वारा उसे इनलार्जमेंट (बड़ा) कराकर आपके पास भेज देंगे। यह सुन श्रीपंडितजी महाराज ने सब (जानते हुए भी) आश्चर्य की मुद्रा से कहा कि हाँ, चित्र छोटे से बड़ा हो जायगा! अच्छा, उस चित्र से बड़ा आनंद आवेगा। कोई चित्र दे दो।* आज्ञा की देर थी आपने प्रसन्नतापूर्वक शीघ्रता से आकर एक चित्र दिया। पश्चात् वे लोग श्रीमहाराजजी का दर्शन कर चित्र लेकर चले गए।

सं० १६५८ की माघ कृष्ण चौदस थी। श्रीपंडितजी महाराज अस्वस्थ थे। उसी दिन एक महानुभाव आए। और महात्माजी से कहा कि हम सरकार के शरणागत होंगे। आपने कहा कि कल मौनी अमावस्या है और महोदय योग है। अतः कल शरणागत होना। यह कहकर आप श्रीगुरुदेव महाराज के निकट आए और उनसे कहा कि एक व्यक्ति शरणागत होने के लिये आये हैं हमने उनसे कहा कि कल अमावस है कल ही शरणागत होना। श्रीगुरुदेव महाराज ने कहा— उन्हें बुलाओ और पूछो कि उनकी क्या इच्छा है। वे बुलाए

* वही चित्र अद्यावधि श्रीसद्गुरु-सदन में विराजमान है।

गए और उनसे पूछा तो उन्होंने कहा कि हमारी इच्छा आज ही शरणागत होने की है। श्रीगुरुदेव महाराज ने कहा कि अच्छा है आज ही हो जाओ। पश्चात् उन सज्जन को शरणागत किया। उक्त दिन और रात्रि बीती। रात्रि में ही ३ बजे श्रीगुरुदेव महाराज उठे और लघुशंका करके पर्यंक पर लेट गए। और कहा कि अब क्या होना चाहिए। महात्माजी ने कहा कि जो आज्ञा। आपने कहा—कम्बल ओढ़ा दो। आपने ओढ़ा दिया। श्रीगुरुदेव महाराज ने कहा—"वाह बच्चा, क्या खूब है?" आप बाहर चले आए। चार बजे, पाँच बजे, छः बजे। पर श्रीपंडितजी महाराज नहीं उठे। तब लोगों ने आपसे कहा कि सरकार अभी तक क्यों नहीं उठे आप जाकर देखिए। आपने सभय दो तीन आवाज़ें धीरे-धीरे दीं परंतु उत्तर कुछ भी नहीं मिला। तब आप ने बाहर आकर उपस्थित महानुभावों से कहा कि हमने दो तीन आवाजें दीं परंतु उत्तर नहीं मिला। बाराबंकी के हकीम रामाधीनजी के पिता उस समय वहाँ उपस्थित थे। वे और श्रीबाबा हरिहरशरण अंदर गए और बाबाजी ने मुख के ऊपर से कम्बल हटाया। तथा हकीमजी नब्ज देखते ही पछाड़ खा गिर पड़े। यह खबर बिजली-सी सारे अयोध्याजी में फैल गई। विमान बना। बड़े धूमधाम से आप रामघाट पधारे। वहाँ से लौटने पर श्रीचरण पादुका जी को श्रीमहात्माजी ने पधराया। उसके तीसरे दिन चित्रपट लेकर बा० हरचरणलालजी आए। जो कई थान कपड़ों में लपेटा था। उपस्थित व्यक्तियों ने कहा कि श्रीमहाराजजी आ गए। महंत श्रीलखनलालशरणजी आदि सभी थे। रामायणी

श्रीरामरघुवीरशरणजी महाराज ने कहा—"रामवल्लभाशरणजी चित्रपट को खोलिए देखें महाराजजी किसकी ओर मुह करके बैठते हैं। आप चित्र-पट को हाथ से पकड़ कर कपड़ा खोलने लगे। सब कपड़ा हट जाने पर चित्रपट रूप श्रीसद्गुरु भगवान की छवि महात्माजी की ओर ही थी। सबों ने एक स्वर से कहा कि श्रीमहाराजजी इन्हें विशेष प्यार करते हैं। वे चित्रपट भगवान पर्यंक पर विराजमान कराये गए। रुपयों का ढेर लग गया। और प्रतिदिन उत्साह होने लगे।

जब श्रीगुरुदेव महाराज श्रीरामघाट जाने लगे थे उस समय उनका वह अँचला जो उतारा गया था उसे आपने रख लिया था। उसे एक संदूक में जिसमें वह नोट वाला कब्जा, पत्थर (इस पत्थर से श्रीगुरुदेव महाराज एक बार बादाम तोड़ते थे बादाम तोड़ते समय वह पत्थर टूट गया। बादाम न टूटा। श्रीसिया सोहाग बाग की कोठरी के चौखट में बादाम का वह गड्ढा अभी तक बना है) श्रीगुरुदेव महाराज के वस्त्र सुखाने की डोरी, अष्ट सिद्धि, नव निधि, अँचला, लँगोटी आदि श्रीगुरुदेव महाराज की स्पर्श की हुई चीजें रखी हैं जिनका पूजन होता है। प्रायः उस अचले को लेकर आप कहा करते थे कि यह हमारा प्राण है यह हमारा सर्वस्व है यह हमारे गुरु-वियोग का पत्र है। जब मेरा शरीर छूटेगा तो इसी में लपेटकर मेरे शरीर को प्रवाहित करे ऐसा प्रेमी कौन होगा? उस समय श्रीरामदेवशरणजी जो किले के महंतजी के शिष्य हैं और महात्माजी के साधक शिष्य हैं वे उस समय महात्माजी की सेवा में ही थे। उन्होंने कहा कि हाँ ऐसा कौन होगा? श्रीमहात्माजी ने कहा कि यह काम

तुम्हीं को करना होगा। तब श्रीरामदेवशरणजी ने कहा कि सरकार यदि मेरा शरीर पहले छूट जाय तब ? यह सुन आपने कहा—कि यह कैसे होगा कि गुरु बैठा रहे और चेला चला जाय ? यह तो तुम्हें करना ही होगा।

भाद्रबदी १ को श्रीमुरारीदासजी के स्थान में सरकार की घोड़ेपर झाँकी होती है। आपको उस दिन रात्रि में श्रीगुरुदेव महाराज की सेवा में ही एक बज गया था। जल खूब बरस रहा था। आप और श्रीरामदेवशरणजी सप्त-सागर में जंघा तक जल और तुलसी बाड़ी में कमर तक जल मँझाते हुए पहुँचे। आरती की तैयारी हो रही थी। आपको देखते ही महंतजी बड़े प्रसन्न हुए आरती रोकी गई और कहा कि आपकी ही प्रतीक्षा हो रही थी। पश्चात् आपने चार पद गाए आरती हुई और ब्यारू कर आप श्रीलक्ष्मण किला आए।

आप कुशोत्पाटनी अमावस्या (भाद्र अमावस्या) को कई संतों के साथ मनीपर्वत गए। ठंढाई बनी। भोग लगाया गया। पश्चात् आपने ठंढाई पी और शौच के लिये चले। कुछ दूर गए थे कि रुक गए इतने में एक काला सर्प आया और आपके दाएँ पैर को घेर जूते पर फन रखकर बैठ गया। आपने रामदेवशरणजी को बुलाया। और कहा कि यह लीला देखो। रामदेवशरणजी ने दण्डवत किया और हाथ जोड़कर कहा कि आप श्रीमहाराजजी का दर्शन कर चुके। अब श्रीमहाराजजी को क्रिया के लिये जाने दीजिए। वह सर्प आपके चारों ओर घूमकर अर्थात् परिक्रमा करके चला गया।

आप श्रीगुरुजी की सेवा में तनिक भी त्रुटि नहीं होने

देते थे। वाल्मीकिजी के कथनानुसार "तुम तें अधिक गुरुहिं जिय जानी। सकल भाव सेवहिं सनमानी।" को भली-भाँति चरितार्थ करते। आप पत्र द्वारा श्रीगुरुमहाराज से आज्ञा लेकर ही कार्य करते थे। बिना उनकी आज्ञा के कोई कार्य नहीं करते थे। आपकी अनन्य गुरु-निष्ठा देख श्रीअवध तथा श्रीअवध के बाहर के लोग आपको बड़े सम्मान की दृष्टि से देखने लगे। आपके यहाँ बहुत से साधु महात्मा आते थे। श्रीगुरुदेवजी के सामने श्रीयुगलानन्यशरणजी के ग्रंथों की कथा होने लगी। इसी समय वैशाख आगया श्री-किशोरीजी के जन्मोत्सव की बधाई की तिथि आई। तो श्रीमहात्माजी तैयारी करने लगे। जब यह बात महंत श्रीलखन-लालशरणजी को मालूम हुई तो उन्होंने महात्माजी से कहा कि बधाई श्रीकिशोरीजी के मंदिर में होगी। आपने कहा कि मंदिर के स्वामी तो आप हैं आप कीजिए। हम तो श्रीगुरुदेव-जी के सामने करेंगे जिसमें वे भी सुन सकें। दूसरी बात यह है कि अगहन मास में श्रीहनुमानजी का जन्मोत्सव* श्रीगुरु-

---

* श्रीहनुमानजी का जन्म तीन तिथियों में माना जाता है। कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी को गोधूलि वेला में आविर्भाव हुआ। अगहन कृष्णाष्टमी को १२ बजे रात्रि में आविर्भाव माना जाता है। और चैत्र की पूर्णिमा को प्रातःकाल सूर्योदय के पूर्व आविर्भाव है। कल्पभेद हैं। महात्माजी अगहन वाला उत्सव करते हैं क्योंकि श्रीगुरुदेव महाराज की कमर में दर्द हुई थी उसके अच्छे होने पर यह उत्सव प्रारंभ किया गया था। उस पहले उत्सव में यह पद महात्माजी ने गाया था।

पवनकुमार ये ये ये।

श्रीअंजनी कल गर्भ व्योम सुसोम कपि तम तोम हर भे कुमुद जन प्रद प्यार।

देवजी के सामने हुआ है अतः श्रीकिशोरीजी की बधाई भी श्रीगुरुदेवजी के सामने ही होगी। यह बात सुनकर महंतजी मन ही मन रुष्ट हो गए। प्रत्यक्षरूप से महात्माजी की उक्त बात के विरुद्ध तो कुछ कह ही नहीं सकते थे। उस वर्ष बधाई बड़े धूम से हुई। अयोध्याजी के बहुत से साधु-संत उत्सव में आते थे। महात्माजी की ओर से सभी का यथोचित सत्कार हुआ। उत्सव की यह विशालता और धूम-धाम देखकर महंतजी भीतर ही भीतर बेतरह कुढ़े। और ऐसा षड़यंत्र रचने लगे कि श्रीरामवल्लभाशरणजी इस स्थान से हट जायँ। महंत जी ने एक वेश्या द्वारा महात्माजी पर झूठा दावा दायर करवा दिया। परंतु जिसके रक्षक श्रीगुरुदेव हैं उसका कोई बाल भी बाँका नहीं कर सकता। श्रीगुरुदेव की कृपा से वह दावा स्वयं खारिज हो गया। तब महंत ने आपको निकालने के लिये दीवानी में दावा दायर किया। वर्षों तक मुकदमा चला। अंत में सब जज ने श्रीमहात्माजी से प्रश्न किया कि आपके महाराज वसीयत में लिखते हैं कि अपने जीवन भर मैं मालिक। हमारे बाद रामउदारशरण महंत उनके बाद लखनलालशरण महंत। इस नियम के अनुसार तो इनके गुरु ही जब महंत नहीं हुए तो ये कैसे महंत हो सकते हैं। क्योंकि इनके गुरु महाराज का

यह मास कातिक रास रस चौदसि सुचौदह भुवन आनँद कर बिनोद अपार।
मंगल सुशनि संध्या समय स्वाती सुचातक चित्त हित बित दैन चैन अपार।
बर बदन सुखमा-सदन मदन अनेक हूँ को मद मथन सिय राम प्राण अधार।
विधि बामता कि कुरेख पै दै मेख लगन सुमेख मेटत दरद गर्दन हार।
जय जयति जुगल विहारिणी सिय पिय महल नित नव बधाई बजत मंगल चार।
पवनकुमार ये ये ये।

शरीर छूटने के छः महीने बाद आपके महाराज का शरीर छूटता है। अतः क्या आपको वहाँ का अधिकार दे दिया जाय ? यह सुन आपने इनकार किया और कहा कि हमारे श्रीगुरु महाराज के मुखारविंद से निकला था "जो हमारा सच्चा चेला होगा वह किले की ओर निगाह नहीं करेगा। अतः जब हम अपने गुरुदेव के सच्चे शिष्य न हों तब तो किले की ओर निगाह करें। यह सुन हाकिम ने फैजाबाद के प्रसिद्ध वकील स्वर्गीय बा० बलदेवप्रसादजी से कहा कि आप इन्हें समझा दीजिए। वकील साहब के कहने पर भी आपने उन्हें इसी प्रकार का उत्तर दिया। यह बात सुनकर धर्मात्मा वकील बलदेवप्रसाद बहुत प्रसन्न हुए और कहा कि श्रीगुरुदेव की बात में ऐसा ही विश्वास रखना चाहिए। श्रीबलदेवप्रसादजी ने सब जज से महात्माजी की प्रतिज्ञा अँगरेजी में कह सुनाई जिसे सुनकर सब जज बहुत प्रसन्न हुआ और उसने महात्माजी को श्रीसिया-सुहागबाग एवं जिस मकान में श्रीगुरुमहाराज रहते थे उसकी डिगरी दी।✽

✽ जिस दिन फैसला की तारीख थी। उस दिन श्रीगुरुवार था। जब आप फैजाबाद कचहरी को चलने लगे तब काकागुरु श्रीमहाराज राम रघुवीर शरणजी ने कहा कि देखें क्या होता है ? आपने कहा—

श्रीगुरुवार वार नहिं लैहैं।
विजय विभूति हमैं दिलवैहैं ॥

कह, दंडवत कर चल दिए। वास्तव में वही हुआ।

उस समय श्रीमहंतजी की ओर से तरह-तरह के समाचार फैलते थे। आपके पास जो भयप्रद खबरें आवें तो लानेवाले से ही आप निर्भीकतापूर्वक कहते थे कि—

इसके बाद महंत ने जज साहेब के यहाँ अपील की। जज के यहाँ से महात्माजी हार गए। तब महात्माजी ने लखनऊ में अपील की। हाईकोर्ट के हाकिम ने महात्माजी से पूछा कि श्रीगुरुजी के यहाँ जो पूजा चढ़ती है उसे आप महंतजी को देंगे। तो वकील ने उत्तर दिया कि हाकिम होकर ऐसा कहते हैं तो हम दिला देंगे। और महंतजी के वकील से पूछा कि महंतजी श्रीरामवल्लभाशरणजी को किले से निकाल नहीं सकते। तो महंतजी के वकील ने भी उत्तर दिया कि हम हजूर की बात टाल नहीं सकते। तब हाकिम ने यही फैसला लिख दिया। महात्माजी पूर्ववत् वहाँ रहने लगे। वह डिगरी का कागज़ जब आप किले से चले तब मंदिर के द्वार पर चढ़ा दिया।

एक दिन उनके वकील श्रीबलदेवप्रसादजी ने कहा कि आपको इस स्थान पर रहने की हमारी राय नहीं है क्योंकि जहाँ विरोध हो वहाँ महात्मा को नहीं रहना चाहिए। बलदेव-प्रसादजी की इस बात को आपने स्वीकार किया। उधर महंत तो यह चाहते ही थे कि ये किसी तरह किले से चले जायँ। उन्होंने एक दिन महात्माजी को यह कहलाया कि आप श्री-गुरुदेवजी का चित्रपट तथा अन्य जो सामान है उसे साथ में लेकर जाना चाहें तो हम चले जाने देंगे। महंतजी की यह बात सुन महात्माजी बड़े प्रसन्न हुए। उस समय वैशाख का महीना

श्रीसत्या कोशला जननि गोद मोदयुत लेटे हैं।
श्रीसतगुरु करुणेस कृपा से अविचल पिय हिय भेंटे हैं॥
जगत प्रपंच रंचहू नहिं सुख दस दिसि हाथ समेटे हैं।
राम वल्लभाशरण डरे केहि बड़े बाप के बेटे हैं॥

था अतः महंतजी ने एक पत्र लिख दिया कि वैशाख की पूर्णमासी तक आप चले जायँगे तो यह समझौता माना जायगा। उसके बाद नहीं। महात्माजी ने इसे स्वीकार कर लिया।

उसी वैशाख मास में काशीवासी कचौड़ीगली के रईस श्री बाबू कामेश्वरप्रसादजी के द्वितीय पुत्र बाबू गजाधरप्रसाद उपनाम दाऊजी श्रीअयोध्याजी आए। यद्यपि दाऊजी रामानुजीय वैष्णव थे। परंतु श्रीकिशोरीजीकी शरणागति के लिये श्रीमहात्माजी से शरणागत हुए। क्योंकि शास्त्र का सिद्धांत है—"न हिये एकस्मात् गुरोर्ज्ञान" के सिद्धांत से दूसरा गुरु करने के लिये निषेध करते हैं। किन्तु शास्त्रों में लिखा है कि अन्य मंत्रों का उपदेश हुआ हो और श्रीराम मंत्र न लिया हो तो श्रीराम मंत्र ले सकता है। राममंत्र होने के पश्चात् दूसरा मंत्र नहीं लिया जा सकता। श्रीदाऊजी काशी चले गए। वैशाख की त्रयोदशी को महात्माजी श्रीगुरुदेवजी का चित्रपट, श्रीचरणपादुका और साढ़े पाँच घड़ा रज* और सवा रुपया नगद आदि सहित अपने गुरुभाई श्री बाबू कुंदनलालजी के घर पर चले आए। जब आप किले से चले तो आपके प्रेम से काका गुरु महाराज श्रीरामरघुवीरशरणजी और गुरुभाई श्रीहरिहरशरणजी, श्रीसीतारामशरणजी, श्रीअवधशरणजी तथा गुरु बहिन

---

* जब श्रीगुरुदेवजी महाराज साकेत पधारे तब से जहाँ पर वे रहते थे उस स्थान के बुहारने में जो कूड़ा होता था। उसे चलनी से चालकर महात्मा जी रखते जाते थे। यही आगे चलकर श्रीसद्गुरु-सदन की इमारतों की नींव में दी गई है। महात्माजी कहते थे—"कुए जाना से खाक़ लाए हैं। अपना काबा अलग बनाए हैं।

श्रीसत्याजी ये सब लोग श्रीमहात्माजी के साथ चले आए। श्रीकुंदनलालजी के मकान में श्रीगुरुदेवजी के चित्रपट पधराए गए और बड़े आनंद के साथ समय बीतने लगा।

जब से श्रीमहात्माजी गुरु महाराज की सेवा में रहने लगे, तभी से श्रीबाबा हरिहरशरणजी श्रीसीताकूप (यह कूप श्रीजन्मस्थान के निकट है। इसकी महिमा अपार है, इसका जल पीनेवाला मूर्ख व्यक्ति भी विद्वान् होते देखा गया है यहीं का जल श्रीगुरुदेव महाराज पीते थे) का जल लाया करते थे। जब तक शरीर रहा तब तक उन्होंने जल लाने की सेवा की। अब भी मंदिर श्रीसद्गुरु-सदन में श्रीसद्गुरु भगवान को श्रीसीताकूप ही का जल भोग लगता है।

जब आप किले पर थे उसी समय फूलपुर रियासत की महारानी की ओर से तीन रुपया प्रतिदिन के हिसाब से साधु-सेवा के लिये आने लगा था। कुछ दिन बाद दुष्टों ने महारानी से महात्माजी की शिकायत की तो महारानी ने जाँच करने के लिये आदमी को भेजा। जब वे आए तो उन्होंने महात्माजी से कहा कि हिसाब का रजिस्टर रखिए। जिससे वहाँ से लोग आकर जाँच लेंगे। किसी को कहने का मौका न रहेगा। आपने कहा कि दुनिया भर का प्रपंच पालने के लिये हम साधु नहीं हुए हैं। बनियों का सा हिसाब हमसे नहीं हो सकता। तब उन लोगों ने कहा—अब केवल सूखा अन्न दिया जायगा। तो महात्माजी ने उत्तर दिया कि जिसका हृदय सूखा हो वह सूखा अन्न बाँटेगा। हमारा हृदय तो श्री प्रियाप्रीतम के अनुराग में सरस हो रहा है। हमसे सूखा अन्न नहीं बाँटा

जायगा। यह कहकर लेने से इनकार कर दिया।

इसके पश्चात् आकाशवृत्ति पर ही कार्य चलने लगा। आपसे बाबू बलदेवप्रसादजी वकील ने कहा कि यहाँ हमारी जो कोठी है उसे हम आपको देते हैं आप उसमें रहिए। आपने कहा कि श्रीसरयूजी वहाँ से दूर हैं। हम श्रीसरयूजी के किनारे ही रहेंगे। इसी प्रकार राजगोपाल मंदिर (भूढ़) के महंत श्रीविश्वंभर दासजी ने भी कहा कि पुराने भूढ़ स्थान को हम आपके नाम लिख देते हैं और संतों के लिये भी कुछ प्रबंध हो जाता है। आप चले आवें। कहकर बड़ा आग्रह किया। उन्हेंभी आपने यही उत्तर दिया कि हम तो सरयूजी के किनारे झोपड़ी ही डालकर रहेंगे। पर श्रीसरयूजी का किनारा नहीं छोड़ेंगे। इसी प्रकार और भी कई सज्जनों को आपने यही उत्तर दिया।

रहने के लिये श्रीसरयूजी के तट पर स्थान ढूँढ़ा जाने लगा। पापमोचन घाट के बगल की जमीन जहाँ संध्या समय प्रायः कोई जा नहीं सकता था। (क्योंकि उस समय वहाँ एकदम जंगल ही था, शाम होते ही सियार बोलने लगते थे) उस स्थान के लिये श्रीगुरुदेव महाराज से आज्ञा ली, आज्ञा मिल गई। वह ज़मीन खरीदने के लिये श्रीधर्मदासजी* ने ५००) सर्वप्रथम

---

* श्रीभगवानदासजी की मंडली में आप श्रीरामजी के स्वरूप बनते थे। ये विरक्त संत हैं। श्रीमहात्माजी से आपसे गहरा प्रेम था। पहले आप श्रीशृङ्गार-कुंज में रहते थे। पश्चात् श्रीमहात्माजी के साथ रहने लगे। आपका स्वरूप सुंदर एवं परम सुकुमार है। सभी सन्त-मण्डली आपको विशेष सम्मान की दृष्टि से देखती है। मिथिला प्रान्तीय नवाही के श्रीपरमहंसजी के आप साधक शिष्य हैं। स्थान के आप परम हित-चिंतक हैं। आपका जैसा नाम है वैसा गुण

श्रीयुतमहामान्य श्री १०८ जानकीवरशरणमहर्षि

दिया। और भी रुपए एकत्र कर जमीन खरीद की गई। महंत श्रीश्यामसुंदर शरणजी ने एक ध्वजा लेकर मंदिर की बाईं ओर पीपल के वृक्ष में (मंदिर के दोनों ओर दो वृहदाकार पीपल के वृक्ष हैं।) बाँधकर कहा श्रीरामवल्लभाशरण! लो तुम्हारे नाम का पताका फहरायगा।

श्रीकाशीजी से श्रीपुरुषोत्तमशरणजी† और श्रीसियामोहिनीशरणजी (दाऊजी) आए और महात्माजीसे प्रार्थना की कि मंदिर-निर्माण के खर्च के लिये काशी से सब आवे। आपने कहा—बच्चा! इसमें लगेगा सबका, पर नाम तुम्हारा ही होगा। इसके अनुसार शुभ मुहूर्त्त में नींव पड़ी। नींव में एवं मंदिर की जोड़ाई के गारे में "चरण-रज" पड़ती थी। बनवाने का प्रबंध श्रीधर्मदासजी के हाथ में था। कड़ी धूप में छाता लगाए मजदूरों के साथ कार्य किया करते थे। श्रीमहात्माजी ठंढई लेकर अपने हाथों वहाँ जाकर उन्हें पिलाते थे। प्रीति की रीति न्यारी होती है। मंदिर तैयार हुआ। श्रीगुरुदेव महाराज की सवारी बड़े धूम से निकली। और मंदिर में पधारे। पर्यंक के ऊपर श्रीगुरुदेव महाराज के चित्रपट विराजमान हुए। और उनके नीचे चौकी पर श्रीसीतारामजी, श्रीलखनलालजी आदि के विग्रह पधराए गए। नित नव उत्सव एवं आनंद होने लगा।

भी है। आपको महात्माजी भगवान् कहा करते थे अतः आपको सभी धर्म भगवान् कहा करते हैं।

† ये श्रीमहात्माजी के गुरुभाई हैं। इन्हीं के द्वारा दाऊजी किले पर आए। जब दाऊ जी का शरीर छूट गया तब ये विरक्त होकर श्रीसद्गुरु-सदन में रहने लगे। और वर्तमान समय में स्थान के अधिकारी यही हैं।

श्रीठाकुरजी की मूर्त्ति नीचे पधराई गई। यह देखकर बहुत-से साधुओं ने आपसे कहा कि यह उचित नहीं हुआ। कुछ ही समय बाद श्रीरामानुजाचार्य जी की गद्दी तोताद्रि के अधिपति आए। महात्माजी ने उनसे पूछा। उन्होंने कहा—एक बार श्रीयामुनाचार्यजी (श्रीरामानुचार्य के गुरु) कहीं जाते थे। उनके ठाकुरजी का सिंहासन श्रीरामानुजाचार्यजी अपने माथे पर लिए थे। और सिंहासन के ऊपर श्रीयामुनाचार्यजी की पादुका रख ली थी। श्रीयामुनाचार्यजी ने देखा और पूछा कि तुमने यह क्या किया ? उत्तर दिया—वे आपके ठाकुर हैं, ये हमारे ठाकुर हैं। यह बात सुनकर सब लोगों का संदेह दूर हो गया।

श्रीमहात्माजी के सुंदर शील-स्वभाव के कारण सभी मत के लोग आपसे प्रेम रखते थे। एक आचारी वैष्णव श्रीमधुसूदनाचारीजी* गान-विद्या में बड़े कुशल थे। वे श्रीरामलीला के ऐसे भावुक प्रेमी थे कि एक बार जो स्वरूप बनते थे उनमें सदैव उसी स्वरूप की भावना रखते थे। उनकी लीला में लोगों को अपार आनंद मिलता था। एक बार आपने श्रीमहात्माजी के लीला अवलोकनार्थ श्रीअयोध्याजी में भी लीला की। इस लीला का आनंद वर्णन नहीं हो सकता जिन्होंने देखा है वे ही जानते हैं। लीला के अंत में श्रीयुगल सरकार की पतंग-लीला

* चँदवारा जिला बाँदा में आपका स्थान है जिसका नाम श्रीवैदेहीवाटिका है। आपने श्रीअवध में भी मकान बनवाना प्रारंभ किया था। परंतु उसके निर्मित होने के पूर्व ही आपका शरीर छूट गया। आपकी रचनाएँ श्रीमधुपअली के नाम से हैं।

हुई। जो श्रीसद्गुरु-सदन की छत के ऊपर हुई। जिस समय श्रीयुगल सरकार के पतंग बढ़े उस समय प्रत्यक्ष ऐसा मालूम होने लगा कि आकाश में देवतागण विमान पर आकर श्री-युगल सरकार की पतंग-लीला देख रहे हैं। उक्त स्वामीजी ने स्वरूपों और लीला-मंडली के सहित श्रीचित्रकूट की परिक्रमा की थी। जिस दिन श्रीफटिक शिला पर श्रीयुगल सरकार के फूलों का शृङ्गार करके परस्पर हाव-भाव के कटाक्ष होने लगे उस समय महात्माओं के रहस्य के पद गानेवाले गाने लगे। प्रत्यक्ष रहस्य का आनंद होने लगा। श्रीस्वामीजी की लीला में ऐसा आनंद हमेशा हुआ करता था। इस परिक्रमा में प्रबंधक श्रीधर्मदासजी थे।

एक बार श्रीमहात्माजी श्रीअवध के प्रसिद्ध कनक-भवन में गए। यहाँ श्रीयुगल सरकार की वही प्राचीन मूर्ति* अब तक विद्यमान है जो श्रीविक्रमादित्य को मिली थी। इस मंदिर में श्रीअयोध्याजी के जितने महात्मा हैं सभी नित्य दर्शन करने जाते हैं। श्रीयुगल सरकार के सामने महात्माजी का गान होने लगा। महात्माजी बड़े अनुराग से सुना रहे थे कि इसी बीच श्रीकिशोरीजी के कर-कमल से गुलाब का फूल गिरा वहाँ पर जितने महात्मा बैठे थे सब आश्चर्यचकित हो गए। श्रीपुजारीजी ने वह पुष्प उठाकर महात्माजी को प्रसादी दी।

---

* जब श्रीकृष्ण भगवान् तीर्थयात्रा को चले तब श्रीअवध आए और एक तपस्विनी भक्तिवती महिला को ये मूर्तियाँ प्रदान कीं। और कहा—तुम इन्हीं की सेवा-पूजा करो। तुम्हारी इच्छा पूरी होगी। जब विक्रमादित्य श्रीअवध का शोधन करने आवें तो इन्हें उन्हें सौंप देना।

एक महात्मा श्रीचिदाकाश नाम के थे। उनसे श्रीमहात्मा-जी का बहुत प्रेम था। उनका शरीर बड़ा सुंदर था और वे सदा प्रसन्न-मुख रहते थे। इन महात्मा के साथ महात्माजी का सत्संग बहुत दिनों तक रहा। जब महात्माजी भ्रमण करते थे तो उस भ्रमण में उनके साथ भी कई स्थानों में गए। महात्माजी के एक गुरुभाई श्रीसत्याशरणजी कानपुर जिले के रहनेवाले हैं। ये महात्माजी में गुरुवत् प्रेम रखते हैं। शास्त्रों में लिखा भी है—'गुरुवद्‌गुरु शिष्येषु।' सत्याशरणजी कानपुर में एक सेठ की ठाकुरबाड़ी में प्रबंधक हैं इनका पवित्र आचरण देखकर बहुत से लोग इनके शिष्य होते हैं। गुरुपूर्णिमा को श्रीसत्याशरणजी के शिष्य और शिष्याएँ उन्हें विना गुरु-पूजन किए नहीं आने देते। जब गुरु-पूनों को वे सब पूजा कर चुकते हैं तो श्रीसत्याशरणजी उसी दिन रात की ट्रेन से सब सामग्री लेकर सीधे श्रीअवध चले आते हैं और सब वस्तुएँ श्रीमहात्माजी को भेंट कर देते हैं उसमें से कुछ भी अपने लिये नहीं रखते यह बात सबलोग जानते हैं। अब भी आप जो वस्तुएँ लाते हैं वह श्री महात्माजी के चित्रपट स्वरूप के सामने रखते हैं।

श्रीमहात्माजी श्रीलीला स्वरूपों में बड़ा प्रेम रखते थे। श्री अवध में जहाँ कहीं भी लीला होती गुरुसेवा से अवकाश मिलने पर आप वहाँ अवश्य जाते थे। और श्रीलीलाविहारी के संमुख दो-चार पद अवश्य सुनाते थे। आपका गान ऐसा सरस और मधुर होता था कि सभी लोग मुग्ध हो जाते थे।

कुछ दिनों के पश्चात् यवन लोगों की कुर्बानी का समय

आया। यवनों ने गोहिंसा की तैयारी की। उस समय कार्तिक सुदी एकादशी थी। इस दिन श्री अयोध्या की पंचकोसी परिक्रमा होती है।* बाहरी जनता की भी भीड़ होती है। उस दिन जब रामदल गाता बजाता चला तो अपार भीड़ हुई। जिसे देखनेवाले ही जानते हैं। जब हिंदू लोगों को गोहिंसा का समाचार ज्ञात हुआ तो उन्होंने उसे रोकना चाहा। रोकने में लड़ाई हो गई। जिसके फलस्वरूप हिंदू-मुसलमान हताहत हुए। श्रीअयोध्याजी में हलचल मच गई और गवर्नमेंट ने फौज तथा पुलिस द्वारा दंगे को शांत किया। दंगा शांत होने के बाद लोगों की गिरफतारी होने लगी। कुछ मुसलमानों ने द्वेषवश महात्माजी का भी नाम लिखा दिया। और साथ ही बलवा का मुखिया भी करार किया। महात्माजी को तो श्री-गुरुपूजा-सेवा और भजन से अवकाश ही नहीं मिलता था कि वे बिना प्रयोजन कहीं जाते पर ईश्वरेच्छा ऐसी ही थी। महात्माजी की परीक्षा का अवसर था। थानेदार तथा अंग्रेज कप्तान वारंट लेकर महात्माजी के पास आए। उस समय महात्माजी मंदिर में गुरु की सेवा कर रहे थे। उन्होंने थानेदार से कहा कि आरती करके चलता हूँ। थानेदार ने आपसे कहा—'अच्छा, आप आरती कर लीजिए तब तक हम लोग बैठते हैं।' महात्माजी ने आरती करके दडवत कर चरणोदक लिया और बालभोग स्वयं ग्रहण किया और थानेदार को भी दिया। इसके बाद

---

* कार्तिक शुक्ल अक्षय नवमी को श्रीअयोध्याजी की १४ कोस की परिक्रमा होती है। और दशमी को विश्राम होकर एकादशी को पंचकोसी होती है। इन परिक्रमाओं के लिये बाहर से लाखों की संख्या में लोग आते हैं।

आप इक्के पर बैठकर थानेदार के साथ चले। आप फैजाबाद में रखे गए। बहुत प्रयत्न करने पर तीसरे दिन आपकी जमानत मंजूर हुई। मुकदमा चला। आपको छः वर्ष की सजा हुई। आपके साथ ही और भी इक्कीस मनुष्यों को सजा हुई। जब आपको यह विदित हुआ कि सजा हो गई। और जब चलने का समय आया तो आपने एक पद निर्माण कर भीतर मंदिर से जगमोहन में बैठे हुए श्रीसियाबिहारी शरणजी को बुलाकर दिया।

[लावनी]

मति कहौ किसी से बात मरम की प्यारे।
नित मुदा रहो इस दुनिया से मन मारे॥
यह है सराय संसार रहन लघु दिन को।
मत कर गुमान नर तनहिं आस नहिं छिन को॥
भै रावणादि बहु बली गर्व रह्यो जिनको।
ते मिटे मिनट के बीच पता नहीं तिनको॥
याते श्रीगुरुपद नाम सु रहो सम्हारे।
मत कहो किसी से बात मरम की प्यारे॥
तव देखत देखत जात चले बहुतेरे।
श्रुति संत महंत अनंत कहत हैं टेरे॥
भव-सागर अगम अपार नाम प्रभु बेरो।
करु सियबर नाम ललाम मनन मन मेरो॥
मिटै प्रबल अविद्या कटक होहिं सुख सारे।
मत कहो किसी से बात मरम की प्यारे॥
नित रहिए श्रीगुरु पास आस सब लहिए।
तिहुँ रिन से होय बिबाक पाक दिल चहिए॥

श्री जानकिवर तव नेह सुमन करि नहिए।
लखि दृग संसार असार धार नहिं बहिए॥
हैं रामवल्लभासरनद रक्ष हमारे।
मत कहो किसी से बात मरम की प्यारे॥

और कहा कि सरकारी कार्य से जाता हूँ करके शीघ्र लौटूँगा। इसके पश्चात् आरती करके जब इक्के पर बैठकर आप चलने लगे उस समय जो हा-हाकार मची है। वह कहा नहीं जा सकता। कोई रोता है, कोई पीटता है। आपने प्रसन्न-वदनसब को धैर्य दिया कि घबड़ाने का अवसर नहीं है। आपके प्रेमियों ने उसकी अपील हाईकोर्ट में की। वहाँ से छः मास की सजा कम हो गई। जेल सुपरिंटेंडेंट ने आपसे कहा कि यहाँ अधिक मियाद के कैदी नहीं रहते। अतः आप दूसरी जगह भेजे जायँगे। आप कहाँ जाना पसंद करते हैं? काशी या किसी दूसरी जगह? आपने कहा कि जब श्रीअवध से बाहर ही जाना है तो अन्य स्थानों की अपेक्षा काशी ही सर्वोत्तम है।

आप श्रीकाशीजी के जेल में भेजे गए। जेल के नियमानु-सार सुपरिंटेंडेंट ने कहा कि बाल बनवाना होगा। आपने कहा कि हम लोगों के बाल नहीं बनते। साहब ने कहा कि यहाँ सिक्खों के बाल नहीं बनते और सभी के बनते हैं। बाल बन-वाना ही होगा। आपने कहा कि यह जानते हो हम बलवे के सरगना कायम होकर आए हैं। सिर उतार लो तो बाल और कंठी एक साथ उतर जायँगे। इसके बिना नहीं हो सकता। तब साहब ने कहा—अच्छा ये दोनों न उतारे जायँगे।

उसी दिन रात को एक जालिम कैदी जेल से भाग गया।

उसे ढूँढने में साहब को बहुत परेशानी उठानी पड़ी और उसके परिश्रम से उसे ज्वर आगया। किसी ने साहब की मेम से यह कह दिया कि आज साहब ने अयोध्याजी के प्रसिद्ध साधु का दिल दुखाया है। इसीसे साहब को इतनी परेशानी हुई। साहब की मेम ने उससे कहा कि तुमने अयोध्या के साधु का दिल दुखाया है इसीलिए तुमको दुख मिला है। अब उस साधु के साथ कड़ाई न करना। और प्रेम से बातें करना उस समय से साहब महात्मा जी का बड़ा ध्यान रखता था और जब आता तो बड़े प्रेम से उनसे बातें करता था।

जब तीन दिन तक आपने भोजन नहीं किया। तब जेलर ने कहा कि आप भोजन नहीं करते हमारे ऊपर जवाबदेही आवेगी। अतः हम रिपोर्ट करते हैं। आपने कहा— कर दो। जेलर के रिपोर्ट करने पर सुपरिंटेंडेंट आया। उसने कहा—तुम क्यों नहीं खाते? आपने कहा कि नहीं खायँगे। उसने कहा—नहीं खायगा मर जायगा। आपने कहा मुझे आज यह मालूम हुआ कि न खाने से हम मर जायँगे। और आप खाते हैं इसलिये आप अमर रहेंगे। अतः हमारे मरने से क्या होगा। आपको अमर रहना चाहिए। साहब ने जेलर से पूछा—क्या कहता है। जेलर ने अँगरेजी में समझाया। तब साहब ने कहा कि जो तुम कहो वही तुम्हारे लिये प्रबंध कर दिया जाय। आपने कहा कि यदि हमें खिलाना है तो हम फलाहार कर सकते हैं। साहब ने कहा—अच्छा। साहब ने स्टोर कीपर को बुलाया (वह मुसलमान था)। साहब ने उसे एक सेर आलू प्रतिदिन देने का आर्डर

दिया। उसने कहा कि आलू नहीं है। तब साहब ने हाथ से इशारा करके यह बताया कि बड़ा सा फल (कुम्हड़ा) जो होता है उसे खा सकता है। महात्माजी ने कहा—हाँ। कुम्हड़ा के साथ साथ सेर भर दूध नित्य देने का हुक्म दिया। अब आपको दोनों वस्तुएँ नित्य मिलने लगीं।

जेल में पं० विश्वनाथप्रसाद अवस्थी और भगवानदीन दो कर्मचारी महात्माजी से प्रेम करते थे। इनके द्वारा बाहर से तरह तरह के फलाहार आते थे। और आपने जेल चलने के समय बालों में श्रीगुरुदेव महाराज के चरण-रज की गोली रख ली थी। उन्हीं का भोग लगाकर आप पाते।

एक दिन महात्माजी ने साहब से पुस्तक तथा काग़ज़, पेंसिल के लिये कहा तो उसने उन्हें विश्रामसागर तथा काग़ज़ पेंसिल दिला दी। अब वह महात्माजी के पास नित्य आकर उनसे उनका हाल पूछ लेता। एक दिन उसने महात्माजी से कहा कि यहाँ पर तुम मोटे हो गए हो। तो महात्माजी ने कहा—'तुम भी फलाहार करो तो मोटे हो जाओगे। साहब हँसकर चला गया।

आपकी जब इच्छा होती तब साहब से कहकर जेल के अन्य वार्डों में भी घूमने जाया करते। कभी-कभी साहब के बँगले पर भी जाते थे। एक दिन उस वार्ड में गए जिसमें आपके साथ आए हुए साधुओं में से बालकदासजी भी थे। इन्हें मोटा देखकर चक्की में दे दिया था उन्होंने आपको देखकर डबडबाई आँख किए हुए कहा—बड़ा कष्ट है। चक्की चलाई नहीं जाती। आपने कहा—अच्छा! यह कह आप चले आए।

दूसरे दिन जब साहब रौंद में आया। उसके साथ में उसका बच्चा भी था। उसने आपसे पूछा—बाबा, क्या करता है। आप न बोले। दुबारा फिर पूछा—फिर भी जब आप न बोले (उस समय आप दरवाजे की ओर पीठ किए और दीवाल की ओर मुख किए बैठे थे)। तब साहब ने निकट जाकर कंधे पर हाथ रख पूछा--आप बोलता क्यों नहीं ? तबियत कैसी है ? आपने आँख उठाई। और कहा--तबीयत ठीक नहीं है। पूछा--क्यों ? क्या हुआ ? आपने बच्चे का हाथ पकड़कर कहा। कि यदि इस बच्चे को कोई दुख दे तो तुम्हारी तबीयत प्रसन्न रहेगी या दुखी होगी। साहब ने कहा--रंज होगी। इसी प्रकार हमारे बच्चे को आपने चक्की में दिया है। और उसे कष्ट हो रहा है तो हमारी तबीयत कैसे ठीक रहे ? साहब ने कहा--वह मोटा साधू आपका चेला है ! अच्छा, उसको हम आपके पास रखता है। अब आप प्रसन्न हो जायँ। आपने कहा--मैं प्रसन्न हूँ। साहब ने जाकर बालकदासजी को चक्की से छुड़ा आपके पास भेज दिया। वे आपके पास ही रहने लगे। और उनका जेल-जीवन सुखमय बीतने लगा।

एक दिन आप फलाहार का भोग लगा रहे थे उसी समय साहब मेम और बच्चों को साथ में लिए हुए आया। पूछा—बाबा क्या करता है ? आपने कहा—अब भोजन की तैयारी हो रही है। उसने कहा – क्या हम उसे देख सकते हैं। आपने कहा—हाँ ! आपने फलाहार प्रसाद में से बच्चे और मेम साहब को दिया। मेम साहब और बच्चे ने उसी जगह खाया। और साहब से कुछ अँग्रेजी में कहा। तब साहब ने कहा कि आपने

श्री सिया मोहिनी शरणजी
(बाबू गदाधरप्रसाद उर्फ दाऊ जी)

हमको नहीं दिया। हम भी खायगा। फिर आपने साहब को भी दिया। साहब ने भी खाया और कहा कि इतना अच्छा फलाहार होता है तब फलाहार क्यों न खाय! यह कहकर साहब चला गया।

महात्माजी श्रीयुगल सरकार के विनय के दो चार पद प्रतिदिन लिखते थे। और पं० विश्वनाथप्रसाद अवस्थी के द्वारा श्रीसियामोहनीशरण के पास भेज देते थे उनको श्रीसियामोहनीशरणजी के मित्र और महात्माजी के गुरुभाई श्रीपुरुषोत्तमशरणजी लिख लेते थे। वह एक अपूर्व ग्रंथ होगया। उसका नाम श्रीविजयप्रद सुखसार हुआ। एक बार महाराज दियरा ने भी फल-मेवादि बहुत सी वस्तुएँ भेजीं थीं।†

आपके जेल जाने से आपके सभी प्रेमी शिष्य अत्यन्त दुखी थे। श्रीसियालालशरणजी ने संकटमोचन हनुमानजी में नाम का अनुष्ठान किया। कानपुर में श्रीसत्याशरणजी केवल दूध पान कर रहते और अनुष्ठान करते। श्रीअवध में आपके मित्र श्रीधर्मदासजी एवं आपके गुरुभ्राता बाबा श्री-हरिहरशरणजी महाराज श्रीगुरुदेवजी महाराज के निकट प्रार्थनाएँ किया करते और श्रीसियामोहनी शरणजी ने श्रीकार्तिक मास भर अपने बगीचे में रहकर मौनव्रत धारण कर अष्ट भोगों का परित्याग नियम किया था।

जब महात्माजी हाईकोर्ट से नहीं छूटे तब श्रीभगद्प्रेरणा

---

† इसके उत्तर में आपने प्रत्येक वस्तु पर पद्य लिखे वे पद्य भी विजयप्रद सुख-सार में लिखे हैं। पुस्तक अप्रकाशित है।

से अयोध्या और फैजाबाद की जनता की ओर से गवर्नर के यहाँ मेमोरियल (प्रार्थना-पत्र) दिया गया। दियरा के महाराज का महात्माजी पर बड़ा प्रेम था उन्होंने तन मन धन से उद्योग किया। और श्रीरामनगर के महाराज काशीनरेश ने भी गवर्नर से (जब वे काशी आए) महात्माजी को छोड़ने के लिए कहा। गवर्नर ने वादा किया कि जब हम अयोध्याजी जायँगे तब यह कार्य होगा। जब गवर्नर फैजाबाद में आकर कमिश्नर की कोठी में ठहरे तो दूसरे दिन वे श्रीअवध दर्शन करने के लिये गए। पहले जन्मभूमि का दर्शन करने गए। यहाँ का ऐसा माहात्म्य है कि यहाँ एक बार श्रीसीताराम नाम लेने से एक करोड़ नाम जप का फल होता है। गवर्नर को यहाँ पर एक चमत्कार दिखलाई पड़ा। सिंहासन पर श्रीलाल साहब के सामने एक ज्योति जलती हुई दिखलाई पड़ी। यह देखकर गवर्नर को बड़ी श्रद्धा हुई और उन्होंने पचास रुपया चढ़ाया। वहाँ से श्रीहनुमानगढ़ी गए। श्रीहनुमानजी का दर्शन कर जब फैजाबाद वापस आए। तो महात्माजी को इक्कीस आदमियों के सहित छोड़ने की आज्ञा दी। उनके छूटने का तार बनारस जेल में आया। और महात्माजी को यह ज्ञात हुआ कि छूटने का तार आया है तो आपने यह पद निर्माण किया—

बहुरि नहिं आवना जग-जेल।
धर्म मार्ग दुख झेलि निकास्यो श्रीसद्गुरु करि खेल।
गाय बचाय सचाय धर्मपथ पुनि प्रभु कीन्ही मेल।
बिपुल जन्म को मल बिक्षेपहिं मिल्यो प्रेम-सरि हेल।
विपिन प्रमोद बिनोद मोद हिय बढ़िहै सुकृत सकेल।

जुगल बिहारिनि हिय तमाल लसि खिलै प्रेम नित बेल ।

फैजाबाद के रईश तथा वकील बाबू महेन्द्रदेव वर्मा (लालजी) भी बनारस गए । महात्माजी के श्रीचरणों में आपका बड़ा प्रेम था । महात्माजी के छोड़ने की बात श्रीसियामोहिनी शरणजी को मालूम हुई । वे उनके छोटे भाई श्रीकृष्णनारायणप्रसादजी और भतीजे श्रीगोपालजी बहुत से काशी-वासी रईसों को साथ लेकर जेल से बड़े समारोह के साथ महात्माजी को अपनी ठाकुर-वाड़ी (मंदिर श्रीनिवास) नीचीबाग में लाकर ठहराया । महात्मा जी ने श्रीगंगाजी में स्नान कर श्रीविश्वनाथजी का दर्शन कर फलाहार किया । और इसके बाद श्रीसंकटमोचन श्रीहनुमानजी गए । यहाँ आपके शिष्य श्रीसियालालशरणजी थे । ये अपने शिष्यों सहित महात्माजी की सेवा में उपस्थित हुए । वहाँ से लौटकर आप रसूलपुर भगत श्रीपुरुषोत्तमशरणजी* के यहाँ गए । पश्चात् सबके साथ आप साढ़े पाँच मास बाद श्रीअयोध्याजी आए । यहाँ जब आप फैजाबाद सिटी स्टेशन पर उतरे उस समय वहाँ जो आनंद हुआ उसे देखने वाले ही जानते हैं । वहाँ पर दियरा के महाराज, फैजाबाद के सभी रईस, श्रीधनीरामजी, लाला रामरघुवीर आदि एकत्र थे । महात्माजी को गाड़ी से उतार कर उन्हें फूल-माला पहनाया । फूलों की वृष्टि हुई ।

---

* ये रस्तोगी वैश्य थे । श्रीस्वामी युगलानन्यशरणजी के शिष्य थे । बड़े धार्मिक तथा परोपकारी एवं संत-सेवी थे । इनके यहाँ सभी संतसेवी हैं । इनके पुत्र श्रीसियारघुनाथशरणजी महात्माजी के गुरुभाई हैं और पौत्रादि सब महात्माजी के चेला हैं । इन्हीं के यहाँ के सत्संग से श्रीपुरुषोत्तमशरणजी (वर्तमान श्रीसद्गुरु-सदन के अधिकारी) इस अवस्था को प्राप्त हुए हैं ।

दियरा के राजा साहेब से मिलकर महात्माजी पुनः गाड़ी पर बैठे। गाड़ी से घोड़े खोल दिए गए। और फैजाबाद के रईसों ने गाड़ी में स्वयं कंधा लगाया। रास्ते में जय-जय ध्वनि और फूलों की वृष्टि होती थी। फैजाबाद चौक होते हुए श्रीमहात्माजी बाबू बलदेवप्रसादजी के घर पर ठहराए गए। यहाँ पर एक रात रहकर दूसरे दिन दियरा के महाराज के स्थान पर गए। वहाँ से श्रीहनुमानजी का दर्शन कर परिक्रमा कर स्थान को चले। जिस समय आप श्रीसद्गुरु-सदन के द्वार पर पहुँचे उस समय वहाँ आपके मित्र श्रीधर्मदासजी ने आपके स्वागत की ऐसी तैयारी की थी जैसी श्रीरामजी के स्वागत की तैयारी श्रीभरतजी ने की थी। श्रीअयोध्यावासी महात्मा पं० श्रीरामवल्लभाशरणजी तथा श्रीअवध के सभी महात्मा आपके स्वागत के लिये उपस्थित थे।

महात्माजी मोटर से उतर अपने नामारासी पंडितजी से मिलकर अन्य उपस्थित लोगों से मिलने के पश्चात् श्रीसरयूजी का दर्शन कर आचमन कर श्रीगुरुदेवजी के सामने साष्टांग दंडवत करके सब संतों सहित जगमोहन में विराजमान हुए। तब महात्माजी ने जेल की कथा सुनाई। सब कथा सुनाने के बाद आपने कहा कि हमने जेल में एक कवित्त श्री हनुमानजी की प्रार्थना में बनाया और उसे बड़े प्रेम से गाकर प्रार्थना किया उसी के बाद हम जेल से छोड़े गए। इसी प्रकार श्रीमिथिलांतर्गत पचाढ़ी स्थान के महात्मा श्रीसेवारामजी भी जेल से छूटे थे। ये महात्मा बड़े सिद्ध पुरुष थे। किसी संबंध में आपको जेल जाना पड़ा था। आपने एक दिन एक नवीन

पद बनाकर भगवान की स्तुति की। उसके पश्चात् ही आप छोड़ दिए गए। भगवान ऐसी लीला अपने भक्तों से इसी लिये कराते हैं जिसमें उनके भक्तों की कीर्ति हो।

श्रीमहात्माजी श्रीगुरुदेवजी का उत्सव बड़े प्रेम और श्रद्धा से करते थे। सब उत्सवों में झूला उत्सव अधिक समारोह से होता है। श्रीगुरुपूनो से ही आपके यहाँ झूला पड़ जाता है। जिसका कारण आप यह बतलाते थे कि श्रीरामजी गुरुपूनों को चारो भाइयों और महारानियों सहित श्रीवशिष्ठजी का पूजन बड़े प्रेम से उनके यहाँ जाकर करते थे। श्रीवशिष्ठजी चारों भाइयों के लिये चार झूले तैयार कराते थे तथा उन चारों पर चारो भाइयों को स्त्रियों-सहित बैठाकर बड़े प्रेम से झुलाते थे। और उनसे वर माँगते थे कि हे रामजी हम चौरासी लाख योनियों में भटक चुके हैं अब हमको न भटकाइए। इसी से हम आपको झूला झुलाते हैं। यह सुनकर श्रीरामजी हँस देते। श्रीरामजी की हँसी माया है (रामो हास करी माया)। उनके हँसते ही श्रीवशिष्ठजी ज्ञान भूलकर माधुर्य में फँस जाते थे। इसीसे महात्मा जी के यहाँ गुरुपूर्णिमा से भाद्र कृष्ण तृतीया तक झूला होता है। तृतीया को रात्रि भर झूला होकर प्रातःकाल आरती हो उतर जाता है।

महात्माजी का स्वभाव बड़ा सरल था। श्रीगोस्वामी तुलसीदासजी की 'सरल स्वभाव न मन कुटिलाई' उनके स्वभाव में पूर्ण रूप से घटित होती थी। आपका समय एक मिनट भी व्यर्थ नहीं जाता था। आप सदैव श्रीसीताराम का रहस्य अनुभव करते थे और जैसा अनुभव करते थे वैसा ही पद

भी रचते थे। इस प्रकार आपने बहुत सी रचना रची उनमें कुछ ग्रन्थ रूप में छप गयी हैं। और अधिकांश अभी तक नहीं छपीं।

जिस समय महात्माजी जेल में थे उस समय आपके बहुत से प्रेमी आपके जेल से छूटने के लिये मनौती माने थे। उनमें से आपके एक गुरु भाई श्रीरामबहादुरशरण मुख्तार भी थे।

ये सीतामढ़ी के रहनेवाले थे। वहाँ पर उनका बनवाया हुआ बड़ा भारी मंदिर है। जब श्रीमहात्माजी जेल गए तब उन्होंने संकल्प किया कि महात्माजी जेल से छूट जायँ तो उन्हें मिथिला लाकर श्रीकिशोरीजी का दर्शन कराऊँगा। श्रीमहात्माजी को श्रीजनकपुर बुलाने के लिए आपके पास पत्र लिखा। महात्माजी ने श्रीगुरुदेवजी से आज्ञा माँगी तो उन्होंने आज्ञा नहीं दी। श्रीमहात्माजी ने उत्तर में लिख भेजा कि श्रीगुरुदेवजी की आज्ञा नहीं है। यह पत्र पाते ही श्रीरामबहादुरशरण स्वयं श्रीअवध आए। और महात्माजी से कहा कि हमारे सामने श्रीगुरुदेवजी से आज्ञा लीजिए क्योंकि आप भी उन्हीं के हैं और हम भी उन्हीं के हैं। देखें कैसे आज्ञा नहीं देते। श्रीमहात्माजी ने ऐसा ही किया। और उन्हें आज्ञा मिल गई। आज्ञा मिलने पर श्रीरामबहादुरशरण को बड़ी प्रसन्नता हुई। और उत्साह के साथ चलने की तैयारी की गई। श्रीहनुमानजी के जन्मोत्सव की बधाई करने के बाद छठी का उत्सव करके जब श्रीमहात्माजी दस साधुओं को साथ ले लकड़मंडी स्टेशन से चले तब उस समय आपके गुरुभाई पंडित

लवकुशशरणजी* को यह पता चला कि श्रीमहात्माजी मिथिला जा रहे हैं। तो वे फल दूध आदि बहुत सी चीजें साथ में लेकर अपनी पत्नी श्री विमलादेई के साथ बस्ती स्टेशन पर पहुँचे और महात्माजी की आरती करके उन्हें सारी चीजें भेंट कीं। श्रीमहात्माजी दूसरे दिन श्रीसीतामढ़ी पहुँचे। सीतामढ़ी के रईश, मारवाड़ी, सेठ आदि पहले से ही श्रीमहात्माजी के स्वागत के लिये मौजूद थे। सब ने श्रीमहात्माजी की आरती कर आदर के साथ गाड़ी से उतारा और फूल-माला बरसाते हुए समारोह के साथ ले चले। श्रीरामबहादुरशरणजी ने अपने मंदिर में श्रीमहात्माजी को ठहराया। श्रीमहात्माजी ने श्रीगुरुपूजा और सेवा करके भोग लगाया और प्रसाद पाया। रात में विश्राम किया। दूसरे दिन प्रोग्राम बना, तैयारी हुई। श्रीराम-बहादुरशरण ने महात्माजी को सब साधुओं के सहित अपनी मोटर पर नौआही पहुँचाया। यह नौआही श्रीवाल्मीकि मुनिजी के रहने का स्थान था। वहाँ पर एक बड़े महात्मा परमहंस श्रीरामशरणजी रहते थे। जब श्रीमहात्माजी अन्य साधुओं के साथ मोटर पर यहाँ पहुँचे तो श्रीपरमहंसजी ने अगवानी कर आदर के साथ श्रीमहात्माजी को ले जाकर ठहराया। वहाँ पर भंडारा हुआ। चलते समय उन्होंने श्रीमहात्माजी की यथेष्ट बिदाई की। यहाँ से श्रीमहात्माजी शिविका पर और अन्य साधु-समुदाय हाथियों पर चढ़ श्रीजनकपुर को चले। जिस दिन

---

* इनका घर का नाम कुशहरदीन शुक्ल है। ये उस समय जिला बस्ती में डिप्टी कलक्टर थे। गत वर्ष ज्येष्ठ कृष्ण नवमी को आपका श्रीअवध में शरीर छूटा।